VISIONIAS

www.visionias.in

MAINS 365

Classroom Study Material

पर्यावरण-I

October 2016 – June 2017

Note: July, August and September Material will be updated in September Last week.

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.

विषय सूची

1. पर्यावरणीय प्रदूषण 4

1.1. वायु प्रदूषण 4

1.1.1. भारत में वायु प्रदूषण: स्थिति 4

1.1.2. दिल्ली में धुंध 5

1.1.3. पराली दहन 6

1.1.4. इनडोर वायु प्रदूषण 8

1.1.5. फ्लाई ऐश उपयोगिता नीति 9

1.1.6. भारत उत्सर्जन मानक 10

1.1.7. ध्वनि प्रदूषण 12

1.2. जल प्रदूषण 13

1.2.1. भारत में जल समस्या 13

1.2.2. गंगा की सफाई 17

1.2.3. गंगा नदी से सम्बंधित समितियाँ 22

1.3. ई - अपशिष्ट 24

1.4. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन 26

1.4.1. प्लास्टिक प्रदूषण 26

1.4.2. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन 28

1.4.3. सिटी कम्पोस्ट पॉलिसी 32

1.5. विविध: प्रदूषण 32

1.5.1. गैर-प्रदूषणकारी औद्योगिक परियोजनाओं की मंजूरी के लिए नियमों को सरल बनाना 32

1.5.2.व्यापक पर्यावरणीय प्रदूषण सूचकांक (CEPI) 33

1.5.3. पॉल्यूटर-पे प्रिन्सिपल 34

2. संरक्षण उपाय 36

2.1. वन संरक्षण 36

2.1.1. कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने में सामुदायिक वनों का महत्व 36

2.1.2. पश्चिमी घाट का संरक्षण 37

2.2. भारत में आर्द्रभूमि (वेटलैंड्स) प्रबंधन 39

2.3. वन्यजीव/ जैव-विविधता संरक्षण 42

2.3.1. मानव-वन्यजीव संघर्ष : 42

2.3.2. वर्मीन मुद्दा: किसानों के लिए खतरा, वनों के लिए वरदान 43

2.3.3. इको-सेंसिटिव जोन 44

2.3.4. तटीय क्षेत्रों का संरक्षण 45

2.3.5. जैव-विविधता के संरक्षण में प्रौद्योगिकी का उपयोग 46

3. जलवायु परिवर्तन 48

3.1. समझौतों और अभिसमयों से सम्बंधित समाचार 48

3.1.1. किगाली समझौता 48

VISION IAS

3.1.2. पेरिस समझौता: हाल ही में हुए विकास ____ 49
3.1.3. भारत: जलवायु परिवर्तन पर समझौते ____ 53

3.2. जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण ____ 56
3.2.1. ग्रीन ग्रोथ की प्राप्ति की धीमी प्रगति ____ 56
3.2.2. जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के साक्ष्य ____ 58
3.2.3. जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करने के लिए भारत द्वारा उठाए गए कदम ____ 59
3.2.4. क्लाइमेट इंजीनियरिंग ____ 60

3.3. स्वच्छ उर्जा ____ 62
3.3.1. कार्बन फुटप्रिंट को कम करना ____ 62
3.3.2. जैव ईंधन (Biofuels) ____ 63
3.3.3. हाइड्रोजन फ्यूल व्हीकल ____ 65
3.3.4. भवनों में ऊर्जा संरक्षण ____ 65

3.4. नवीकरणीय ऊर्जा: हाल में हुए विकास ____ 67

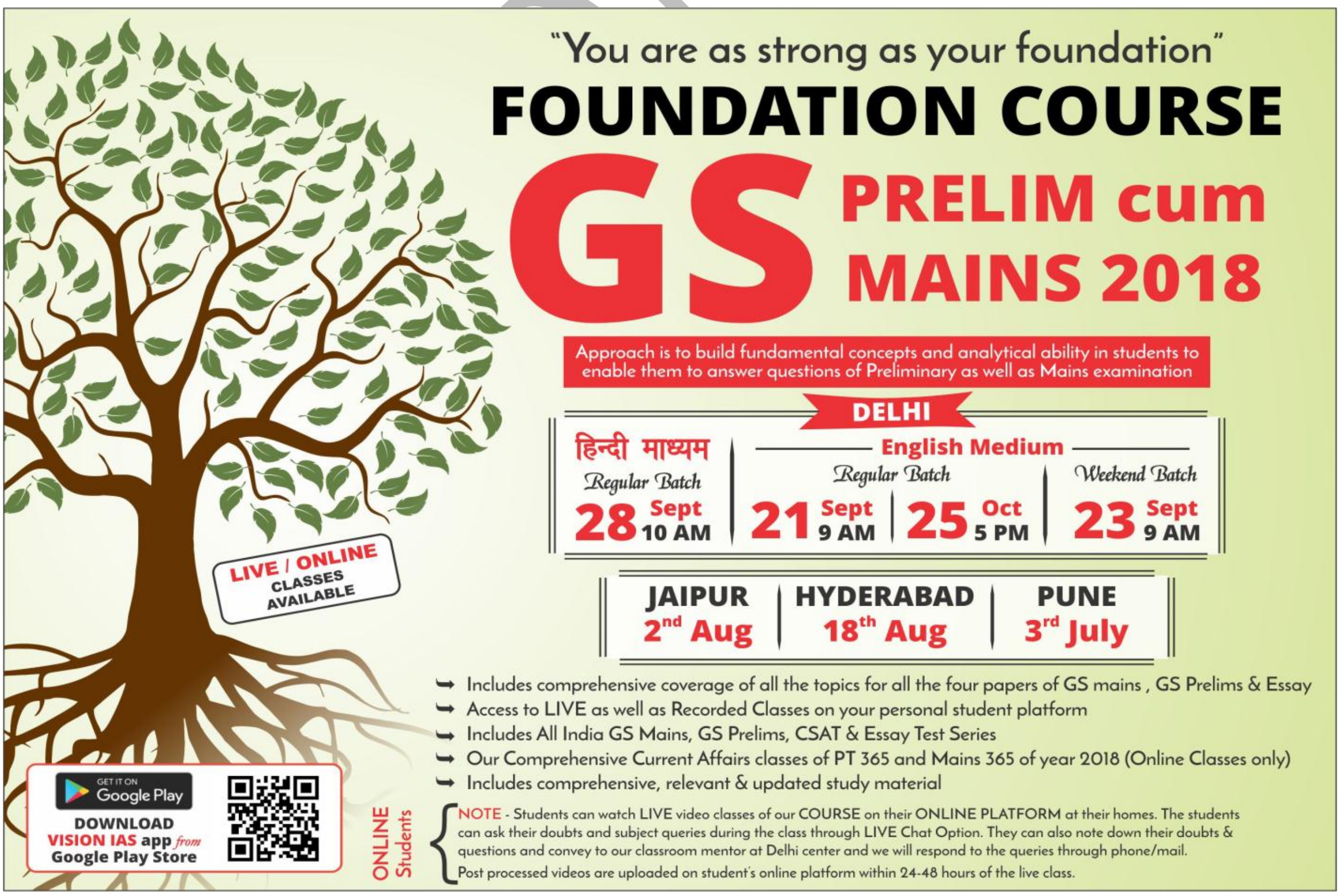

1. पर्यावरणीय प्रदूषण

(ENVIRONMENTAL POLLUTION)

1.1. वायु प्रदूषण

(Air Pollution)

1.1.1. भारत में वायु प्रदूषण: स्थिति

(Air Pollution in India: Status)

WHO द्वारा किये गए अध्ययन तथा अनेक अन्य अध्ययनों में यह तथ्य स्पष्ट किया गया है कि

विगत एक दशक से भारत में वायु की गुणवत्ता में लगातार गिरावट आ रही है।

विभिन्न अध्ययनों का विवरण:

WHO:

- WHO द्वारा जारी किये गए आंकड़ों के अनुसार वायु प्रदूषण हेतु उत्तरदायी हानिकारक सूक्ष्मकण पार्टिकुलेट मैटर(PM) 2.5 की सर्वाधिक मात्रा युक्त 20 प्रदूषित शहरों में से 13 भारत में हैं। इस सूची में दिल्ली शीर्ष स्थान पर है।
- भारत की लगभग 54% आबादी उन क्षेत्रों में रहती है जहाँ हानिकारक सूक्ष्म कणों की मात्रा नेशनल एम्बिएंट एयर क्वालिटी स्टैण्डर्ड (NAAQS) के अनुकूल नहीं है और लगभग प्रत्येक भारतीय (99.5%) ऐसे क्षेत्र में निवास करता है जहाँ वायु प्रदूषण का स्तर WHO के दिशा-निर्देशों के आधार पर निर्धारित अधिकतम स्तर से अधिक है।
- WHO के अनुसार भारत में होने वाली सर्वाधिक मौतों का कारण आउटडोर वायु प्रदूषण है।

CPCB:

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) के अनुसार 77% भारतीय शहरी समूहों में श्वसनयोग्य सस्पेंडेड पार्टिकुलेट मैटर (PM10) की मात्रा NAAQS मानकों से अधिक है।

अन्य रिपोर्ट:

- अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी (IEA) द्वारा जारी नई रिपोर्ट के अनुसार भारत में ऊर्जा की बढ़ती आवश्यकताओं के कारण, वायु की गुणवत्ता में गिरावट हो रही है। इस सन्दर्भ में निवारक कदम उठाए जाने की जरूरत है।
- ग्रीनपीस द्वारा हाल ही में किये गए एक अध्ययन से पता चलता है कि भारत में वायु प्रदूषण का स्तर चीन से अधिक है तथा औसत रूप से भारतीय नागरिक चीन निवासियों की तुलना में हानिकारक पार्टिकुलेट मैटर से अधिक प्रभावित हैं।

भारत और स्टेट ग्लोबल एयर रिपोर्ट 2017

यह 1990 से 2015 तक के नवीनतम वैश्विक आंकड़ों का उपयोग कर वायु की गुणवत्ता पर तैयार की गई पहली रिपोर्ट है।

- आउटडोर वायु प्रदूषण द्वारा भारत में मृत्यु दर में वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप वायु प्रदूषण से होने वाली मौतों के मामलों में भारत ने सबसे प्रदूषित देश चीन को भी पीछे छोड़ दिया है। वायु प्रदूषण द्वारा भारत में लगभग 1.1 मिलियन आकस्मिक मौतें हुई हैं।
- रिपोर्ट के आंकड़ों के अनुसार भारत में प्रदूषण में वृद्धि का कारण भारत की अर्थव्यवस्था में होने वाली वृद्धि है। रिपोर्ट के अनुसार भारत द्वारा हासिल की गयी आर्थिक संवृद्धि का आधार रहे उद्योगों द्वारा मुख्यतः कोयले जैसे ऊर्जा स्रोतों का प्रयोग किया गया जिससे अंततः वायु प्रदूषण में वृद्धि हुई।

भारतीय शहरों एवं नगरीय क्षेत्रों में बढ़ते वायु प्रदूषण की रोकथाम के लिए प्रमुख रणनीतियाँ/कदम

हाल ही में उठाये गए प्रमुख कदम हैं:

- ऑटोमोबाइल एवं औद्योगिक गतिविधियों द्वारा हुए उत्सर्जन तथा NAAQS की अधिसूचना से संबंधित नियंत्रण एवं उपशमन उपाय,

VISION IAS

- पर्यावरणीय अधिनियमों/विधियों का निर्माण,
- परिवेशीय वायु गुणवत्ता के मूल्यांकन के लिए निगरानी नेटवर्क की स्थापना, यथा राष्ट्रीय वायु गुणवत्ता सूचकांक का निर्माण
- गैसीय ईंधन (CNG, LPG आदि) तथा इथेनॉल मिश्रण जैसे स्वच्छ / वैकल्पिक ईधनों का उपयोग,
- स्वच्छ उत्पादन प्रक्रियाओं का संवर्धन,
- 2017 तक BS-4 मानकों का सार्वभौमिकरण; 1 अप्रैल 2020 तक BS-4 से सीधे BS-6 ईंधन मानकों को अपनाना
- विभिन्न अपशिष्ट प्रबंधन नियमों में व्यापक संशोधन तथा निर्माण एवं विध्वंस अपशिष्ट प्रबंधन नियमों की अधिसूचना,
- पत्ते, बायोमास, शहरी ठोस अपशिष्ट को जलाने पर प्रतिबंध
- सार्वजनिक परिवहन और मेट्रो नेटवर्क, ई-रिक्शा, कारपूलिंग, प्रदूषण नियंत्रण प्रमाणपत्र, लेन अनुशासन, वाहन रखरखाव इत्यादि को प्रोत्साहित करना,
- प्रमुख उद्योगों द्वारा निरंतर (24x7) ऑन-लाइन निगरानी उपकरणों का प्रयोग किया जाना

1.1.2. दिल्ली में धुंध

(Delhi Smog)

दिल्ली में धुंध के बारे में

- दिल्ली में लगभग दो दशकों में सबसे खराब धुंध (स्मॉग) देखी गई जिसमें लगातार एक हफ्ते से अधिक तक खतरनाक प्रदूषण स्तर रिकॉर्ड किया गया।
- स्मॉग के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं, जिनमें पंजाब और हरियाणा में पराली जलाना, वाहनों से होने वाले प्रदूषण, दीवाली में पटाखे तथा निर्माण और संबंधित गतिविधियों से धूल का बढ़ता स्तर प्रमुख कारण हैं।
- प्रतिकूल मौसम परिस्थिति जैसे हवा की निम्न गति, तापमान में गिरावट और उच्च आर्द्रता ने प्रदूषकों के प्रसार को अवरुद्ध कर स्थिति को और बिगाड़ा है।

अपनाए गए उपाय

- ऑड-इवन नीति
- 10 वर्ष पुराने डीजल वाहनों पर प्रतिबंध
- सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के राज्यों को वैसे वाणिज्यिक वाहन जिनका गन्तव्य दिल्ली नहीं है, का मार्ग बदलने और वाणिज्यिक वाहनों को दिल्ली से गुजरने से हतोत्साहित करने हेतु पर्यावरण मुआवजा प्रभार (इन्वायरमेंट काम्पन्सेशन चार्ज: ECC) आरोपित करने का आदेश दिया है।

उपर्युक्त उपायों से सम्बंधित मुद्दें

- ये उपाय व्यापक नहीं हैं।
- सभी उपाय राज्यों द्वारा अच्छी तरह से कार्यान्वित नहीं किए गए हैं।
- यहाँ तक कि एकत्र किये गए ECC का भी पूरी तरह उपयोग नहीं किया गया है।

दीर्घकालीन सुझाव

- व्यापक सड़क परिवहन नीति, जिसके अंतर्गत सार्वजनिक परिवहन को बढ़ावा देने की जरूरत है। कई अध्ययनों से पता चला है कि सार्वजनिक परिवहन दिल्ली के 65 प्रतिशत से अधिक लोगों के आने-जाने की जरूरत पूरी करता है लेकिन संपूर्ण रोड स्पेस (road space) का मात्र 5% ही कवर करता है।
- यह निजी वाहनों की खरीद को हतोत्साहित करने के साथ किया जाना चाहिए। इसे प्रदूषण करों, लाइसेंसिंग को युक्तिसंगत बनाने (rationalising licensing) और वाहनों के पंजीकरण, संकुलन कर (congestion tax), कार मुक्त क्षेत्रों आदि के साथ संयोजन में लागू किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- शहरी नियोजन दीर्घकालिक होना चाहिए जिसमें गैर मोटर चालित परिवहन जैसे साइकिल और पैदल चलने के लिए पर्याप्त जगह प्रदान की जाए।
- यहाँ राजनैतिक इच्छाशक्ति चुनौती बन कर खड़ी है, क्योंकि भारत में ऑटोमोबाइल सबसे महत्वपूर्ण उद्योगों में से एक है।

<u>सर्वोच्च न्यायालय : दिल्ली NCR में वायु प्रदूषण से निपटने के लिए श्रेणीबद्ध कार्य योजना</u>

सर्वोच्च न्यायालय ने राजधानी में वायु प्रदूषण की आपात स्थितियों से निपटने के लिए एक व्यापक कार्य योजना को स्वीकृति दी है। इस योजना का निर्माण केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (MoEFCC) ने किया है।

मुख्य विशेषताएँ:

- इसमें वायुमंडलीय पार्टिकुलेट मैटर (PM 2.5 और PM10) के स्तरों के आधार पर वायु प्रदूषण को चार स्तरों में श्रेणीबद्ध किया गया है।
- वायु की गुणवत्ता के आधार पर इमरजेंसी, सिवियर, वेरी पुअर और मॉडरेट पुअर की श्रेणियाँ बनायी गयी हैं। इस योजना को पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण प्राधिकरण (EPCA) द्वारा लागू किया जाएगा।
- NCR में यदि लगातार दो घंटों के लिए PM 2.5 का स्तर 300 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर (μgm/m³) अथवा PM 10 का स्तर 500 μgm/m³ से ऊपर रहता है तो आपातकालीन उपाय स्वतः लागू हो जाएँगे।
- यह योजना वायु प्रदूषण से निपटने के लिए ऑड-इवेन कार राशनिंग योजना और निर्माण गतिविधियों पर प्रतिबंध जैसे उपाय सुझाती है। यह वायु की गुणवत्ता 'वेरी पुअर' श्रेणी में होने की दशा में डीजल जेनरेटरों पर प्रतिबन्ध तथा पार्किंग शुल्क को तीन से चार गुना बढ़ा देने का सुझाव देती है।
- इसमें ईंट के भट्टों, स्टोन क्रशर्स, हॉट मिक्स प्लांट्स और सार्वजनिक परिवहन सेवाओं को बेहतर बनाने से सम्बंधित कई अन्य उपाय भी शामिल हैं। सड़कों की मशीनीकृत सफाई तथा उन पर पानी के छिड़काव को बढ़ाने जैसे उपाय भी इसमें शामिल किये गए हैं।

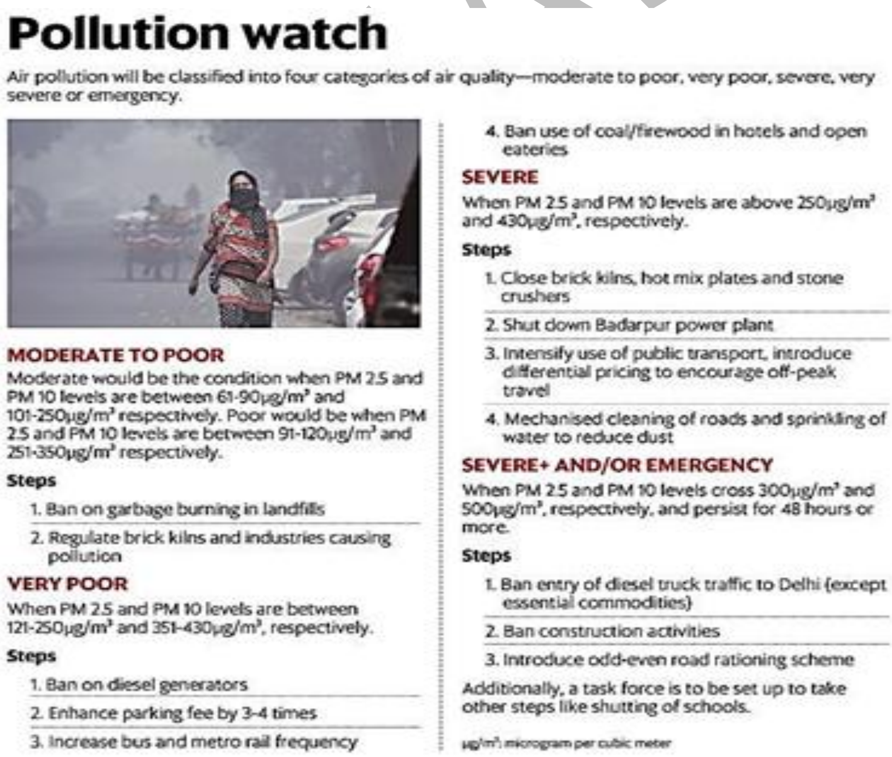

1.1.3. पराली दहन

(Stubble Burning)

पराली दहन की समस्या क्यों है?

- **लागत कारक**: पुआल प्रबंधन अत्यधिक महंगा है और इसकी प्रक्रिया बहुत अधिक समय लेने वाली है। इसके अतिरिक्त, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) का निर्धारण करते समय चारा/भूसा प्रबंधन की लागत को ध्यान में नहीं रखा जाता है।
- **कृषि में बढ़ता मशीनीकरण**: जब धान का उत्पादन बिना उपकरणों के किया जाता था, तब चारे से सम्बद्ध समस्या इतनी गंभीर नहीं थी क्योंकि किसान जितना संभव हो भूमि के निकट से फसल काटते थे। मशीनीकरण के कारण खेतों में फसल अवशेष की मात्रा में वृद्धि हुई है।

- **समय कारक**: बुवाई में विलंब का अर्थ है उपज में गिरावट। इससे खेत को बुवाई के लिए साफ करने में बहुत कम समय मिलता है।
- **गेहूँ और धान की एकल कृषि**: आंध्र प्रदेश में, दालें जैसे काली दाल उगाई जाती है तथा चावल के फसल अपशिष्ट स्वतः नष्ट हो जाते हैं।

प्रभाव

  - पुआल (पराली) को जलाने से अनेक प्रदूषक उत्पन्न होते हैं जिनमें विशेष रूप से पार्टिकुलेट मैटर (PM), CO_2 और ऐश (राख) शामिल हैं।
- उत्तरी-राज्यों में पराली (stubble) का जलाया जाना सिन्धु-गंगा बेसिन के एक बड़े हिस्से में वायु की गुणवत्ता में गिरावट का कारण है। इसके स्थानीय तथा उत्तरवर्ती प्रभाव पंजाब और NCR क्षेत्र से लेकर पश्चिम बंगाल तक महसूस किये जाते हैं।
- दहन के कारण मृदा के ऊपरी संस्तर में पाए जाने वाले लाभदायक बैक्टीरिया, कवक और अन्य प्राकृतिक रूप से लाभदायक सूक्ष्म जीवों की मात्रा कम हो जाती है। इससे किसानों की उर्वरकों पर निर्भरता में वृद्धि होती है।
- वायु प्रदूषण स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं जैसे फेफड़े संबंधी विकार, हृदय रोग आदि के प्रति जोखिम बढ़ाता है।

किये गए उपाय

- नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (NGT) द्वारा कृषि भूमि के आकार के आधार पर पराली दहन में संलग्न किसानों पर 2,500 से 15,000 रुपये तक का जुर्माना लगाया गया है।
- पंजाब में धान के पुआल जलाने पर प्रतिबन्ध लगाया गया है तथा इस हेतु एक स्पेशल टास्क फ़ोर्स का गठन किया गया। बायोमास का बेहतर उपयोग करने और बिजली उत्पादन में इसका उपयोग ईंधन के रूप में करने की पहल का आरंभ किया गया है, उदाहरण- जलखेरी बायोमास पॉवरप्लांट।
- NGT ने NCR क्षेत्र में फसल जलाने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है।

सुझाव

- शीतकाल में सर्वाधिक बायोमास जलाया जाता है जबकि उसी समय चारे के लिए मांग बढ़ रही होती है और इस तरह से अधिशेष सामग्री का कुशलता से उपयोग किया जा सकता है।
- बायोमास से बिजली उत्पादन, यंत्रीकृत कम्पोस्टिंग और बायो गैस उत्पादन को निवेश के द्वारा बढ़ाया जाना चाहिए।
- किसानों को नीतिगत समर्थन देकर उनके उदार स्वीकरण के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- संरक्षण कृषि को लोकप्रिय बनाने की जरुरत है, जो किसानों को नई लो टिल सीडिंग तकनीक (low till seeding technology) अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेगा जिसमें अधिकतर फसल अवशेषों को खेतों में ही बने रहने दिया जाता है। इससे विभिन्न प्रदूषकों की वृद्धि में रोकथाम होती है।
- प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक एम. एस. स्वामीनाथन ने समस्या का समाधान करने के लिए धान के पुआल के व्यवसायीकरण का सुझाव दिया है। धान के पुआल का उपयोग पशु चारा, गत्ता, कागज और अन्य उत्पादों को बनाने के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार, यदि किसानों को पर्याप्त वित्तीय प्रोत्साहन दिया जाए, तो उन्हें इसे जलाने का सहारा नहीं लेना होगा।

आगे की राह

- कृषि विशेषज्ञों ने कहा कि सरकार को इस मुद्दे को पूरी तरह से हल करने की आवश्यकता है न कि केवल किसानों को दंडित करने की। किसानों को दंडित किए जाने वाले प्रावधानों से कोई मदद नहीं मिलेगी क्योंकि उनकी पहचान करना कठिन है। इसके अतिरिक्त, किसान इसे मजबूरीवश जला रहे हैं।
- सरकार गांव के स्तर पर कुछ सीमा तक मशीनीकरण का समर्थन कर सकती है ताकि पुआल को नष्ट किया जा सके और आगे फिर इसका उपयोग खाद बनाने के लिए किया जा सके। किसानों को इसे आर्थिक लाभ के रूप में देखना चाहिए।
- सरकार को उन दालों और तेल के बीजों की भी उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए जो उत्तर भारत के लिए उपयुक्त हैं। इससे फसल प्रतिरूप में परिवर्तन होगा।

VISION IAS

1.1.4. इनडोर वायु प्रदूषण

(Indoor Air Pollution)

इनडोर एयर क्वालिटी (IAQ) विशेषरूप से इमारतों और घरों के भीतर तथा आसपास की वायु की गुणवत्ता को संदर्भित करता है, क्योंकि यह इमारत के निवासियों के स्वास्थ्य एवं सुविधा से संबंधित होता है।

कारण

- घर के अन्दर और इसके चारों ओर वायु की गुणवत्ता विभिन्न गैसों (जैसे- CO_2, CO, रेडोन, वोलेटाइल आर्गेनिक कंपाउंड्स), कणिकीय पदार्थों, माइक्रोबियल संदूषित पदार्थों या स्वास्थ्य के लिए प्रतिकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर सकने वाले कोई भी अन्य ऐसे पदार्थों से गंभीर रूप से संदूषित होती हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में खाना बनाने हेतु प्रयुक्त ईंधन विशेष रूप से लकड़ी, चारकोल, कोयले, गोबर, फसल अवशेष आदि।
- घरों में वेंटिलेशन का अभाव।

प्रभाव

- **स्वास्थ्य पर प्रभाव:** इनडोर वायु प्रदूषण से बच्चे एवं वयस्क विभिन्न रोगों से ग्रसित हो सकते हैं। इस प्रकार होने वाले रोगों की एक विस्तृत श्रृंखला उत्पन्न हो सकती है, इन रोगों में एक्यूट एवं क्रोनिक श्वसन स्थितियां (जैसे निमोनिया, स्थायी प्रतिरोधी फेफड़े संबंधित रोग), फेफड़े का कैंसर, इस्केमिक हृदय रोग, स्ट्रोक और मोतियाबिंद सम्मिलित हैं। इनडोर प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य समस्याओं में वृद्धि हो रही है, इस सिंड्रोम को *सिक बिल्डिंग सिंड्रोम* (SBS) के नाम से जाना जाता है।
- **सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभाव**: खाना पकाने और गर्म करने के लिए ठोस ईंधन का अकुशल प्रयोग अल्पकालिक जलवायु प्रदूषकों (जैसे- ब्लैक कार्बन) की उत्पत्ति का एक प्रमुख स्रोत है तथा ईंधन के रूप में प्रयुक्त लकड़ी की असंधारणीय कटाई स्थानीय वनों के निम्नीकरण हेतु उत्तरदायी होती है। ईंधन संग्रहण कार्य परिवारों पर विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों के लिए बोझ होते हैं।
- **लिंग सम्बन्धी मुद्दे:** इस कारण विशेष रूप से महिलायें घर में धुंए के प्रभाव के साथ-साथ ईंधन संग्रहण और स्टोव प्रचालन के कारण होने वाले समय के नुकसान से भी प्रभावित होती हैं।

इनडोर वायु प्रदूषण को कम करने के लिए हस्तक्षेप:

- संदूषित पदार्थों को कम करने के लिए स्रोत नियंत्रण, निस्पंदन और वेंटिलेशन का उपयोग आदि विधियाँ अधिकांश भवनों में इनडोर वायु की गुणवत्ता सुधारने के प्राथमिक तरीके हैं।
- LPG, बायोगैस, विद्युत्, सौर ऊर्जा आदि जैसे वैकल्पिक ईंधन के प्रयोग में वृद्धि।
- उन्नत स्टोव का प्रयोग।
- उपयोगकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन भी प्रदूषण और जोखिम के स्तर को कम करने में भूमिका निभा सकता है। उदाहरण के लिए, उपयोग करने से पहले ईंधन की लकड़ी को सुखाने से दहन स्तर में सुधार होता है और धुएं की मात्रा में कमी आती है।

इनडोर प्रदूषण की पहचान करने में बाधा

- इस संदर्भ में एक सबसे बड़ी समस्या है- प्रभावशाली वायु गुणवत्ता मापन प्रणाली का अभाव। बहुत से हानिकारक रासायनिक गैसों में ppb (parts per billion) की सांद्रता अत्यंत कम होती है तथा निवर्तमान पर्यावरणीय सेंसर प्रौद्योगिकियों के द्वारा इनका पता लगाना अत्यन्त कठिन होता है और ये केवल ppm (parts per million) सांद्रता का पता लगा सकती हैं।

हाल में हुए विकास

- BPLपरिवारों को LPG कनेक्शन उपलब्ध कराने के लिए सरकार ने प्रधान मंत्री उज्ज्वला योजना (PMUY) शुरू की है।
- वैज्ञानिकों ने घरों में वायु प्रदूषण का पता लगाने के लिए ग्राफीन-आधारित सेंसर और स्विच का विकास किया है।
- नीरधूर: हाल ही में, राष्ट्रीय पर्यावरण और इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान (NEERI) और CSIR ने 'नीरधूर' का विकास किया है। यह खाना पकाने के लिए एक बहु-ईंधन स्टोव है।

VISION IAS

1.1.5. फ्लाई ऐश उपयोगिता नीति

(Fly Ash Utilization Policy)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- महाराष्ट्र राज्य कैबिनेट ने हाल ही में राज्य ताप विद्युत संयंत्र ऐश उपयोगिता नीति को मंजूरी दी है। इसके साथ ही महाराष्ट्र इस नीति को अपनाने वाला पहला राज्य बन गया है।
- यह नीति कोयला आधारित तापीय ऊर्जा संयंत्रों में उत्पादित फ्लाई ऐश के परिवहन पर अंकुश लगाने का प्रयास करती है और स्रोत पर ही सभी कोयला अपशिष्ट का उपयोग करने के उपायों की गारंटी देती है।

महत्व

- इससे वायु प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी चूंकि परिवहन के दौरान फ्लाई ऐश वायु को प्रदूषित करता है।
- इससे फ्लाई ऐश परिवहन लागत को बचाने में मदद मिलेगी; वर्तमान में यह लागत 2000 करोड़ है, जो विद्युत् स्टेशनों द्वारा उत्पन्न किया जाता है।
- यह उपभोक्ताओं के लिए बिजली की लागत में कटौती कर सकती है।
- यह सरकार के लिए अतिरिक्त राजस्व का स्रोत बन जाएगा।

नीति की मुख्य विशेषताएं

- सरकार ने सभी ताप विद्युत संयंत्रों के आसपास के क्षेत्र में फ्लाई ऐश आधारित उद्योगों जैसे कि सीमेंट के क्लस्टर विकास की घोषणा की है। सरकार के साथ संयुक्त उद्यम में उद्योग को भूमि, फ्लाई ऐश और कर के लिए प्रोत्साहन दिया जाएगा।
- फ्लाई ऐश का इस्तेमाल सीमेंट बनाने, पूर्व निर्मित भवन निर्माण सामग्री, ईंटों, सड़कों, आवास और औद्योगिक इमारतों, बांधों, फ्लाईओवर, निम्न भूमि को कृषि योग्य बनाने, बंजर भूमि विकास, खानों के भरने और अन्य सभी निर्माण कार्यों में किया जा सकता है। इन उपयोगों को उपयुक्त रूप से प्रोत्साहित किया जाएगा।
- सरकार ने ग्रामीण विकास, लोक निर्माण विभाग, शहरी विकास, आदिवासी, सामाजिक न्याय जैसे विभागों और प्रमुख योजनाओं जैसे कि सभी के लिए आवास, प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री सड़क योजना को निर्देश दिया है कि अपने कार्यों में कम से कम 15% ऐश घटक का उपयोग करें।
- कोयले के ऐश का कृषि भूमि में इस्तेमाल इसकी उत्पादकता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है और इसलिए कृषि विभाग भी किसानों के बीच फ्लाई ऐश के उपयोग को बढ़ावा दे रहा है।
- सरकार ने भी सेनोस्फेयर (cenospheres) के साथ उपचार के बाद फ्लाई ऐश का निर्यात करने का फैसला किया है जिससे 1,500 करोड़ रुपये के राजस्व सृजन की उम्मीद है।
- सरकार ने प्रदेश के सभी सार्वजनिक और निजी ताप संयंत्रों से उत्पन्न ऐश के प्रबंधन के लिए एक कंपनी, महा जनरल मैनेजमेंट सर्विसेज (MahaGeMS) स्थापित करने का फैसला किया है।

फ्लाई ऐश के बारे में

- *फ्लाई ऐश* कोयले के दहन से उत्पन्न होने वाले उत्पादों में से एक है। यह सूक्ष्म कणों से बनी होती है जोकि *फ्लू* गैसों के साथ *बॉयलर* से बाहर निकल आती है। जो ऐश (राख) *बॉयलर* के तल में बैठ जाती है उसे *बॉटम ऐश* कहते हैं।
- फ्लाई ऐश में सिलिका, एल्यूमीनियम और कैल्शियम के *ऑक्साइड्स* की पर्याप्त मात्रा मौजूद होती है। आर्सेनिक, बोरान, क्रोमियम तथा सीसा जैसे तत्व भी सूक्ष्म मात्रा में पाए जाते हैं। इस प्रकार इससे पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए गंभीर संकट उत्पन्न होते हैं।

भारत में स्थिति

- भारतीय कोयले में 30-40% का अत्यंत उच्च *ऐश कंटेंट* पाया जाता है जबकि इसकी तुलना में आयातित कोयले में यह 10-15% ही होता है।

VISION IAS

- भारत सरकार ने यह अनुभव किया कि इस सीमा को भी एक लाभ में परिवर्तित किया जा सकता है। अतः इस सन्दर्भ में निम्नलिखित कदम उठाए गए :
  - **MoEF ने 2009 में अधिसूचना जारी** कर ऐश के उपयोग के लिए दिशा निर्देश प्रदान किये। इन दिशा निर्देशों में इस बात पर बल दिया गया कि *थर्मल पावर प्लांट* के 100 किमी की त्रिज्या के भीतर ही इसका उपयोग किया जाए।
  - इसका **नवीन तथा नवाचारी ढंग से उपयोग** करना जैसे - *प्री-स्ट्रेस्ड* रेलवे कंक्रीट स्लीपरों के निर्माण में।
  - **परिवहन लागत**: उड़ीसा जैसे कुछ राज्यों ने संयंत्रों को आदेश दिया है कि वो फ्लाई ऐश की परिवहन लागत पर सब्सिडी उपलब्ध कराएँ।
  - सिंगापुर और दुबई जैसे स्थानों से की जाने वाली मांग को देखते हुए हाल ही में महाराष्ट्र सरकार ने फ्लाई ऐश के लिए एक निर्यात नीति तैयार करने का फैसला किया है।
- हालांकि, भारत अभी भी फ्लाई ऐश के उपयोग की अपनी पूरी क्षमता का लाभ नहीं उठा पा रहा है। CSE द्वारा किए गए हाल के एक अध्ययन से पता चला है कि कुल उत्पन्न फ्लाई ऐश के केवल 50 से 60% का ही उपयोग हो पा रहा है।
- इस क्षेत्र में क्षमता बढ़ाने, उद्योगों को प्रोत्साहन देने और नई प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने की आवश्यकता है।

1.1.6. भारत उत्सर्जन मानक

(Bharat Emissions Standards)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- अप्रैल से सम्पूर्ण भारत में वाहन उत्सर्जन मानक, भारत स्टेज IV (BS-IV) लागू किए गए। **इससे पहले पेट्रोल व डीजल के लिए भारत के 63 शहरों में BS-IV मानक लागू थे**। शेष भाग में BS-III मानक प्रयोग किये जाते थे।

भारत स्टेज उत्सर्जन के मानक(Bharat Stage emission standards)

- ये सरकार द्वारा स्थापित ऐसे मानक हैं जो मोटर वाहनों सहित आंतरिक दहन इंजन उपकरणों से निकलने वाले प्रदूषण को विनियमित करते हैं।
- मानकों का निर्धारण और उन्हें लागू करने के लिए समय-सीमा तय करने का कार्य केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) द्वारा किया जाता है। यह बोर्ड पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के अधीन आता है।
- यूरोपीय मानदंडों पर आधारित ये मानक पहली बार 2000 में लाये गये थे।
- भारत पिछले पांच वर्षों से यूरोपीय उत्सर्जन मानदंडों का पालन कर रहा है।
- BS-IV के अनुरूप ईंधन में सल्फर की मात्रा 50 भाग प्रति मिलियन (50 parts per million:ppm) है।
- BS-VI को लागू कर भारत US, जापान और यूरोपीय संघ की लीग में शामिल हो जाएगा, जो यूरो स्टेज VI उत्सर्जन मानदंडों का पालन करते हैं।
- भारत का BS-VI, यूरो स्टेज VI के समरूप है।

पृष्ठभूमि

- भारत ने 1991 में उत्सर्जन मानकों की शुरुआत की। 1996 तक अधिकांश वाहन निर्माताओं को उत्सर्जन में कटौती करने के लिए कैटलिटिक कन्वर्टर्स जैसे टेक्नोलॉजी अपग्रेड्स को शामिल करना पड़ा।
- 1999 में उच्चतम न्यायालय के निर्देशानुसार केंद्र सरकार ने यूरो I और यूरो II के समान क्रमश: भारत स्टेज- I (BIS 2000) और भारत स्टेज -II नियमों को अधिसूचित किया।
- 2014 में, सौमित्र चौधरी समिति ने ऑटो फ्यूल विज़न पॉलिसी 2025 पर अनुशंसाएं दीं। इस समिति ने BS-IV (2017), BS-V (2019) और BS-VI (2024) मानकों के कार्यान्वयन की अनुशंसा की थी।

VISION IAS

- हाल में, सरकार ने वर्तमान BS-IV मानकों के उपरांत BS-V को छोड़ते हुए अप्रैल, 2020 तक सीधे BS-VI मानकों को अपनाने का निर्णय किया। BS-VI सर्वाधिक कठोर उत्सर्जन मानक हैं।

उत्सर्जन में कमी लाने हेतु वाहनों में इस्तेमाल होने वाले तकनीक:

1. डीजल पार्टिकुलेट फिल्टर (DPF):

- यह इंजन के कम्पार्टमेंट में उर्ध्व रूप में रखा एक सिलेंडर है।
- इसका उपयोग BS-V उत्सर्जन मानक के लिए किया जाता है।
- यह डीजल निकास (exhaust) से पार्टिक्यूलेट मैटर/कालिख(soot) निकालता है।
- इसे कार्य करने हेतु 600 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता है, जो भारतीय परिस्थितियों में मुश्किल है।

2. सेलेक्टिव केटेलिटीक रिडक्शन टेक्नॉलोजी (SCR):

- यह अमोनिया युक्त जलीय घोल(aqueous solution) के प्रयोग(injecting) द्वारा नाइट्रोजन आक्साइड के उत्सर्जन को कम करता है।
- इसे BS-VI उत्सर्जन मानक के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- इसे इंजन के निकास(exhaust) में स्थापित(fixed) किया जाता है।

महत्त्व

- ये मानक हानिकारक उत्सर्जन के स्तर को कम करेंगे तथा **श्वास संबंधी रोगों में कमी** लाने में सहायक होंगे।
- BS-VI के स्तर पर, डीजल और पेट्रोल से होने वाले उत्सर्जन के बीच का अंतर कम हो गया है I पहले डीजल कारों को अधिक पार्टिकुलेट मैटर और नाइट्रोजन ऑक्साइड का उत्सर्जन करने की अनुमति दी गयी थी।
- यह कार्बन मोनोऑक्साइड, अधजले हाइड्रोकार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड और उत्सर्जन से निर्मुक्त पार्टिकुलेट मैटर की सांद्रता को कम कर वाहनों के प्रदूषण को कम करने में सहायक होंगे।

चुनौतियां

- सीधे BS-VI में स्थानांतरण के लिए महत्वपूर्ण टेक्नोलॉजिकल अपग्रेड्स की आवश्यकता होगी जिसके लिए वाहन कंपनियों को भारी निवेश करना पड़ सकता है।
- भारत की अपेक्षाकृत छोटी बोनट कारों में DPF लग सकने की सम्भावना अत्यंत कम है।
- आम तौर पर अपग्रेड करने में 4 वर्ष लगते हैं। इस प्रकार सरकार का दृष्टिकोण अत्यधिक त्वरित प्रतीत हो सकता है।
- इससे कारों और अन्य वाहनों के मूल्यों में वृद्धि हो सकती है।
- सीधे यूरो मानदंडों को अपनाना कठिन है, क्योंकि भारत में ड्राइविंग परिस्थितियाँ यूरोप से भिन्न हैं।
- इसके अतिरिक्त, उत्सर्जन में सुधार मात्र से वाहनों के प्रदूषण की समस्या का समाधान नहीं होगा क्योंकि भारतीय शहरों में वाहनों की संख्या अनुपातिक रूप से उच्च है।

आगे की राह

- सरकार को उत्सर्जन मानकों को क्रमिक रूप से अपग्रेड करने के साथ-साथ वैकल्पिक ईंधन जैसे इथेनॉल और मेथेनॉल सम्मिश्रण के प्रयासों पर भी ध्यान देना चाहिए।
- इसके अतिरिक्त सरकार को सर्वप्रथम ईंधन की मांग को कम करने पर ध्यान देना चाहिए। इसके लिए ट्रांजिट ओरिएंटेड डेवलपमेंट पॉलिसी के तहत वेहिकुलर मोबिलिटी के स्थान पर फिजिकल मोबिलिटी पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

1.1.7. ध्वनि प्रदूषण

(Noise Pollution)

सुर्खियों में क्यों?

- उच्चतम ध्वनि प्रदूषण के आधार पर शहरों की रैंकिंग करने वाले "वर्ल्डवाइड हियरिंग इंडेक्स" के अनुसार दिल्ली विश्व का दूसरा सबसे खराब शहर है।

रिपोर्ट का विश्लेषण

- रिपोर्ट के अनुसार ध्वनि प्रदूषित शहरों में रहने वाले अधिकांश व्यक्ति 'श्रवण ह्रास' की समस्या का सामना कर रहे हैं। वर्तमान में दुनिया भर में लगभग 360 मिलियन लोग 'श्रवण ह्रास' की समस्या से प्रभावित हुए हैं जिनमें से 32 मिलियन बच्चे हैं।
- अगले कुछ वर्षों में दुनियाभर में लगभग 1.1 अरब किशोर व्यक्तिगत ऑडियो उपकरणों के असुरक्षित उपयोग और मनोरंजन के स्थानों में ध्वनियों के हानिकारक स्तरों के प्रभाव में रहने के कारण "श्रवण ह्रास" की समस्या से प्रभावित हो सकते हैं।

ध्वनि प्रदूषण

अप्रिय और अवांछित ध्वनि को शोर के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। ध्वनि प्रदूषण, प्रदूषण का एक भौतिक रूप है। यह वायु, मृदा और जल जैसी जीवन रक्षक प्रणालियों के लिए प्रत्यक्ष रूप से हानिकारक नहीं होता है अपितु इसका प्रभाव ग्रहणकर्ता (receiver) पर पड़ता है। मानव इससे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है।

ध्वनि प्रदूषण के कारण:

- **औद्योगीकरण:** अधिकांश उद्योगों में बड़ी मशीनों का उपयोग होता है जो अत्यधिक तीव्र ध्वनि उत्पन्न करती हैं।
- **निम्नस्तरीय नगर नियोजन:** छोटे-छोटे घर, थोड़ी सी जगह में अधिक सदस्यों वाले परिवारों का निवास, पेड़-पौधों की कमी इत्यादि ध्वनि प्रदूषण के कारण बनते हैं। ये सामाजिक पर्यावरण को विकृत कर सकते हैं।
- **सामाजिक कार्यक्रम :** अधिकांश सामाजिक कार्यक्रमों से अत्यधिक शोर उत्पन्न होता है। चाहे विवाह, पार्टियाँ, पब, डिस्को हों या पूजास्थल; लोग सामान्यतः स्थानीय प्रशासन द्वारा निर्धारित नियमों की अवेहलना करते हैं। अत्यधिक शोर वाली गतिविधियों से क्षेत्र का वातावरण असहज हो जाता है।
- **परिवहन:** सड़कों पर वाहनों की बड़ी संख्या, घरों के ऊपर से उड़ने वाले हवाई जहाज, भूमिगत रेलगाड़ियाँ इत्यादि भारी मात्रा में शोर उत्पन्न करते हैं।
- **निर्माण गतिविधियाँ:** खनन गतिविधियाँ तथा बांध, भवन, स्टेशन, सड़क, फ्लाईओवर इत्यादि से सम्बंधित निर्माण गतिविधियों द्वारा काफी अधिक मात्रा में शोर उत्पन्न होता है।

ध्वनि प्रदूषण के प्रभाव:

- भौतिक(फिजिकल) प्रभाव: लगातार अत्यधिक शोर के सम्पर्क में रहने से हमारे कान के पर्दों को नुकसान पहुँचता है जिसके परिणामस्वरूप श्रवण क्षमता में कमी आने लगती है। यह हमारी विविध ध्वनियों के प्रति संवेदनशीलता को भी कम कर देता है। ये वो ध्वनियाँ हैं जिनको हमारे कान स्वाभाविक रूप से ग्रहण करते हैं तथा इनके अनुरूप हमारी शारीरिक गतिविधियों को नियंत्रित करते हैं।

- **कार्यकीय (फिजियोलॉजिकल) प्रभाव:**
  ध्वनि प्रदूषण के मनोवैज्ञानिक लक्षण हैं:
  - उदासी एवं थकान की अधिकता जिनके परिणामस्वरूप व्यक्ति की दक्षता काफी कम हो जाती है।
  - मोटरसाइकिल, अलार्म घड़ियों, कॉल बेल्स, टेलीफोन की घंटी आदि से धीमे लेकिन लगातार होते शोर के कारण झुंझलाहट तथा मानसिक तनाव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
  - अचानक उत्पन्न हुई तीव्र ध्वनि से किसी व्यक्ति की मनोदशा प्रभावित होती है।

VISION IAS

- **वन्यजीवों पर प्रभाव:** वन्यजीवों को मनुष्यों की तुलना में ध्वनि प्रदूषण से अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है क्योंकि वे ध्वनियों पर अधिक आश्रित होते हैं। अत्यधिक शोर के दुष्प्रभाव के प्राथमिक लक्षण घरों में देखे जा सकते हैं। जिन घरों में लगातार शोर होता है, वहां पालतू जानवर अधिक आक्रामक तरीके से प्रतिक्रिया करते हैं। प्रकृति में, जानवरों की श्रवण क्षमता प्रभावित होने से दूसरे जानवर उनका आसानी से शिकार कर लेते हैं। इससे पारिस्थितिक संतुलन भी प्रभावित होता है।

ध्वनि प्रदूषण के समाधान:

- ध्वनि प्रदूषण को रोकने तथा उसे नियंत्रित करने हेतु जन जागरूकता अत्यावश्यक है।
- परिवहन टर्मिनल, उद्योग, हवाई अड्डा तथा रेल टर्मिनल रिहायशी इलाकों से दूर होने चाहिए। औद्योगिक तथा विनिर्माण संयंत्रों में ध्वनिरोधी (soundproof) मशीनें लगाये जाने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- साउंड प्रोसेसिंग उपकरणों के अधिक उपयोग से बचना चाहिए तथा लाउडस्पीकर और अन्य उपकरणों के उपयोग के लिए उचित नियम होने चाहिए।
- वैज्ञानिक नगर नियोजन: स्कूल, कॉलेज और अस्पताल आदि के आस-पास साइलेंस जोन बनाने की आवश्यकता है।
- वृक्षारोपण: यह ध्वनि को अवशोषित करके प्रदूषण को कम करता है तथा शरीर की श्वसन क्षमता हेतु स्वास्थ्यकर है।

सरकार द्वारा उठाए गए कदम

- लाऊड स्पीकर और सार्वजनिक संबोधन प्रणाली से उत्पन्न होने वाले ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए सरकार ने **ध्वनि प्रदूषण (विनियमन और नियंत्रण) संशोधन नियम, 2010** लागू किया है।
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के तहत विभिन्न क्षेत्रों (आवासीय, वाणिज्यिक,औद्योगिक) में श्रेणियों के आधार पर तथा साइलेंस जोन हेतु ध्वनि सम्बन्धी मानकों को अधिसूचित किया गया है।

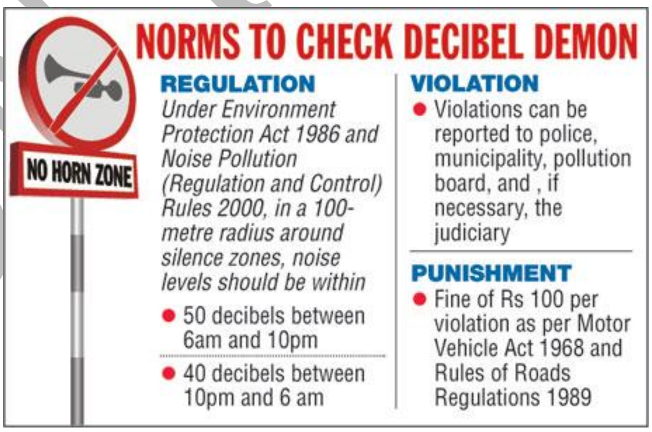

- ऑटोमोबाइल्स, घरेलू उपकरणों और विनिर्माण उपकरणों के उत्पादन स्तर पर ध्वनि सीमा निर्धारित की गई है।
- जनरेटरों, फायर क्रैकर्स और कोयला खानों के लिए मानक निर्मित और अधिसूचित किये गए हैं। विनियामक एजेंसियों को ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित एवं विनियमित करने के लिए सम्बंधित मानकों को लागू करने के निर्देश दिए गए हैं।
- हाल ही में प्रारंभ हुई हरित राजमार्ग योजना से राजमार्गों के आस-पास ध्वनि प्रदूषण को कम करने में सहायता मिलेगी।

1.2. जल प्रदूषण

(Water Pollution)

1.2.1. भारत में जल समस्या

(Water Problem In India)

जल प्रशासन में सुधार

सुर्ख़ियों में क्यों?

- *यूनाइटेड नेशन्स वर्ल्ड वाटर डेवलपमेंट रिपोर्ट, 'वेस्टवाटर: अन्टैप्ड रिसोर्स'* ('Wastewater: the Untapped Resource') में अपशिष्ट जल को **एक समस्या से एक संसाधन के रूप में परिवर्तित** करने के पैराडाइम शिफ्ट की वकालत की है।
- संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का पूर्वानुमान है कि अगले दशक तक जल संकट को शीर्ष वैश्विक खतरा माना जाएगा क्योंकि 2030 तक उद्योग, ऊर्जा एवं कृषि हेतु जल की मांग 50% तक बढ़ जाएगी।

VISION IAS

भारत में जल समस्या के कारण

- कृषक, सिंचाई हेतु भूमिगत जल पर निर्भर हैं।
- कृषकों को प्रदत्त उच्च ऊर्जा सब्सिडी ने अत्यधिक दोहन को प्रोत्साहित किया है।
- जल के उपयोग पर शिथिल विनियमन।
- असंतुलित कीमत प्रोत्साहन; उदाहरण के लिए, धान की खेती को प्रोत्साहित करना जो जल गहन होती है।
- सरकारी संगठनों में जल क्षेत्र में विशेषज्ञता का अभाव।
- सरकारी जलाशयों का अनुकूलतम उपयोग नहीं किया जाना।
- केंद्रीकृत जल उपचार संयंत्र।

यूनाइटेड नेशन्स वर्ल्ड वाटर डेवलपमेंट रिपोर्ट 2017 द्वारा अपशिष्ट जल प्रबंधन के लिए सुझाई गयी **4R** रणनीति:

रिड्यूसिंग (Reducing)

- अपशिष्ट जल प्रवाह को न्यूनतम करना।
- *'आफ्टर-यूज़' ट्रीटमेंट को बढ़ाना।*
- कुछ दूषित पदार्थों के उपयोग पर रोक लगाना या नियंत्रित करना।
- प्रदूषकों के प्रवाह की निगरानी और रिपोर्टिंग करना।

रिमूविंग (Removing)

- अपशिष्ट जल उपचार प्रणालियों की कम लागत वाली विकेंद्रीकृत प्रणाली।
- कृषि और संबद्ध गतिविधियों सहित कई संभावित उपयोगों के लिए पर्याप्त गुणवत्ता का विकास करना।
- अशक्त आबादी की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक महंगी केंद्रीकृत प्रणाली के स्थान पर एक सुरक्षित, सस्ता, सुलभ और प्रभावी विकल्प प्रदान कर सकते हैं।

रियूजिंग (Reusing)

- जल की उपलब्धता बढ़ाना और जल की कमी को पूरा करना।
- जल के अपेक्षित 'सुरक्षित' उपयोग के लिए सबसे उचित स्तर पर अपशिष्ट जल का उपचार करना।
- खाद्य सुरक्षा में वृद्धि करना तथा बेहतर पोषण के लिए अवसर प्रदान करना।

रिकवरी (Recovery)

- अपशिष्ट जल से जैव ईंधन, बायोगैस, ऊष्मा, और विद्युत उत्पादन के रूप में ऊर्जा पुनर्प्राप्त की जा सकती है।
- सीवेज स्लज से नाइट्रोजन और विशेष रूप से फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को पुनर्प्राप्त करना।

भारत और जल परिदृश्य

- भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले 63 मिलियन लोगों तक स्वच्छ जल की आपूर्ति नहीं होती है तथा कुल आधे परिवार अनुपचारित नल के जल पर निर्भर रहते हैं।
- वैश्विक औसत की तुलना में, भारत के खेतों में समान मात्रा में फसल उत्पादन हेतु अधिक जल का उपयोग किया जाता है। भारत में जल के **कुल उपयोग का 92% से अधिक** फसल उत्पादन, चरागाह और पशु जल आपूर्ति में प्रयुक्त होता है। जबकि उद्योग और घरेलू उपयोग में क्रमशः केवल 4.4% और 3.6% जल का उपयोग होता है।
- जल की निम्नस्तरीय स्वच्छता के कारण, पिछले दशक के दौरान जल से उत्पन्न होने वाली स्वास्थ्य समस्याओं में 15% की वृद्धि हुई है।
- अपशिष्ट जल उत्पादन भारत में अनियमित बस्तियों (मलिन बस्तियों) के विकास से जुड़ी सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है।

VISION IAS

- अपशिष्ट जल का एक बड़ा हिस्सा अभी भी एकत्रित या उपचारित किए बिना पर्यावरण में निर्मुक्त (रिलीज) कर दिया जाता है। उदाहरण के लिए, भारत में घरेलू और औद्योगिक अपशिष्ट जल के केवल 8% को उपचारित किया जाता है।
- ग्लोबल वार्मिंग की घटना ने भारत की प्रमुख नदियों की पारिस्थितिकी को परिवर्तित किया है। उदाहरण के लिए, गंगा और सिंधु एक वर्ष में 7 से 11 महीने तक गंभीर रूप से जल की कमी से ग्रस्त होती हैं।

भारत में अपशिष्ट जल उपचार

- भारत में दो प्रकार के अपशिष्ट जल उपचार प्रचलित हैं- सीवेज उपचार और बहिःस्त्रावी उपचार (Effluent treatment)
    - **सीवेज उपचार:** इसमें ऐसे जल का उपचार किया जाता है जो मनुष्यों द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट होते हैं।
    - **बहिःस्त्रावी उपचार:** इसमें औद्योगिक क्षेत्रों से उत्पन्न होने वाले अपशिष्ट शामिल हैं।

इससे सम्बन्धित मानदंड और दिशानिर्देश प्राथमिक रूप से केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) द्वारा निर्धारित किए जाते हैं।

वर्तमान अपशिष्ट जल उपचार तंत्र से संबंधित मुद्दे

- **सीवरेज सुविधाओं के लिए पर्याप्त भूमि और परियोजना स्थल** उपलब्ध कराने की समस्या
- **निम्न क्षमता:** उत्पन्न अपशिष्ट जल के केवल लगभग 31% भाग के उपचार की क्षमता और अलग- अलग शहरों की इन क्षमताओं में भी अंतर है।
- **उपचार संयंत्रों का तकनीकी पिछड़ापन**
- **गैर-प्रतिस्पर्धी मूल्य निर्धारण:** इस कारण यह उद्योगों को आकर्षित नहीं करता है।
- **अपशिष्ट जल के उपचार की निम्न गुणवत्ता:** इसके कारण उपचारित जल का उपयोग कुछ ही औद्योगिक उद्देश्यों जैसे बागवानी, सर्विस वाटर तक ही सीमित है।
- **कमजोर वितरण नेटवर्क:** उपचारित जल का वहन करने के लिए कमजोर परिवहन तंत्र।

जल प्रशासन (गवर्नेंस ऑन वाटर)

- वाटर फुटप्रिंट नेटवर्क के अनुसार भारत सरकार की जल संबंधी नीतियां तथ्यात्मक परिणाम के बजाय प्रतीकात्मक पहलू पर जोर देती हैं।
- मौजूदा जल प्रशासन ढांचे में समन्वय एवं स्पष्टता का अत्यधिक अभाव है। उदाहरण के लिए, मिहिर शाह समिति, 2016 ने स्पष्ट किया कि भारत की मौजूदा जल-प्रशासन प्रणाली साइलो-बेस्ड है। यह प्रणाली भूजल, नदी बेसिन कायाकल्प और अन्य चुनौतियों को पृथक कार्यों के रूप में देखती है।
- भारत की कृषि संबंधी नीतियां जल परिदृश्य के प्रति उदासीन हैं। उदाहरण के लिए, भारतीय खाद्य निगम द्वारा गारंटीकृत खरीद नीति प्रमुख फसलों द्वारा जल की खपत या उनकी जल गहनता की उपेक्षा करती है।
- इसके अतिरिक्त, राष्ट्रीय जल नीति 2012 निष्कर्षण के परिणामस्वरूप जल संसाधनों की किसी भी क्षति के लिए किसी भी विधिक दायित्व (जवाबदेही) का आदेश नहीं देती है।

सुधार

- **शासन पर**
    - जल का जीवन पर बहुआयामी प्रभाव होता है; इस प्रकार, इससे संबंधित नीतियां इसके असंख्य उपयोगों पर आधारित होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, **WFN (वाटर फुटप्रिंट नेटवर्क)** ने जल के उपयोग को तीन प्रकारों में वर्गीकृत किया है: हरा (वर्षा जल); नीला (सतह और भूजल); और भूरा (प्रदूषकों का वहन करने के लिए आवश्यक जल की मात्रा)
    - मिहिर शाह समिति ने जल प्रशासन के अंतर्राष्ट्रीय अध्ययनों के साथ समन्वय के दृष्टिकोण की वकालत की। उदाहरण के लिए, जल से संबंधित प्रशासन हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनात्मक वाष्पन-उत्सर्जन दर (evapotranspiration rates: पौधों द्वारा वाष्पीकरण और वाष्पोत्सर्जन के कारण वायुमंडल में मुक्त होने वाली जल की कुल मात्रा) पर आधारित स्वतंत्र अध्ययनों पर विचार किया जाना चाहिए।

- कृषि से लेकर घरेलू उपयोग तक जल प्रशासन तंत्र का पुनर्गठन और मजबूत अवसंरचना समय की मांग है। उदाहरण के लिए, केंद्रीय जल आयोग और केंद्रीय भूजल बोर्ड के पुनर्गठन पर समिति जल नीति, डेटा और प्रशासन से संबंधित देश के सर्वोच्च सुगमता संगठन के रूप में राष्ट्रीय जल आयोग (NWC) का समर्थन करती है।

- **स्वच्छता पर**
  - विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वच्छता, पेयजल और सफ़ाई व्यवस्था पर व्यय में वृद्धि की आवश्यकता का समर्थन करते हुए, **यूएन-वाटर ग्लोबल एनालिसिस एंड असेसमेंट ऑफ़ सैनिटेशन एंड ड्रिंकिंग-वाटर (GLASS) रिपोर्ट 2017** जारी की।
  - अनियमित बस्तियों में महत्वपूर्ण जागरूकता कार्यक्रमों का क्रियान्वयन समय की मांग है; क्योंकि GLASS रिपोर्ट 2017 के अनुसार सरकारी नीति में **वाश एप्रोच** (WASH: वाटर, सैनिटेशन, और हायजीन) की उपेक्षा की गई है।
- **संरक्षण पर**
  - समुदाय आधारित जल गुणवत्ता निगरानी दिशा-निर्देशों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। संधारणीयता हेतु भूजल पुनर्भरण से सहज रूप से सम्बद्ध अवसंरचना को अपनाया जाना चाहिए।
  - स्रोत पर प्रदूषण को कम करने के अतिरिक्त, नीतिगत पहलों को दूषित पदार्थों को अपशिष्ट जल प्रवाह से हटाने, जल का पुन: उपयोग और उपयोगी उप-उत्पादों को प्राप्त करने पर फोकस करना चाहिए। उदाहरण के लिए:
    - सिंगापुर और दक्षिणी कैलिफोर्निया के तटीय शहर सैन डियागो में लोग पुन:चक्रित जल का उपयोग करते है।
    - जापान के सीवेज ऑपरेटर्स, बायो-सोलिड्स का ऊर्जा के कार्बन-न्यूट्रल रूप में उपयोग करते हैं।
    - वर्ल्ड वाटर डेवलपमेंट रिपोर्ट 2017 के अनुसार विश्व भर में वैश्विक फॉस्फोरस मांग के पांचवे भाग की पुन:चक्रित मानव मलमूत्र के माध्यम से पूर्ति की जा सकती है।
    - अपशिष्ट जल पोषक तत्वों, खनिजों और ऊर्जा का एक समृद्ध स्रोत है। ये सभी अपशिष्ट जल से लागत-प्रभावी ढंग से निकाले जा सकते हैं।

भूजल प्रबंधन

भारत में जल संकट एक बड़ी समस्या बन गई है। भूजल का अनियंत्रित दोहन इस समस्या के एक कारण के साथ-साथ इसका एक परिणाम भी है। सरकार ने इस वर्ष के प्रारंभ में भूजल के सफल प्रबंधन की दिशा में कई कदम उठाए हैं।

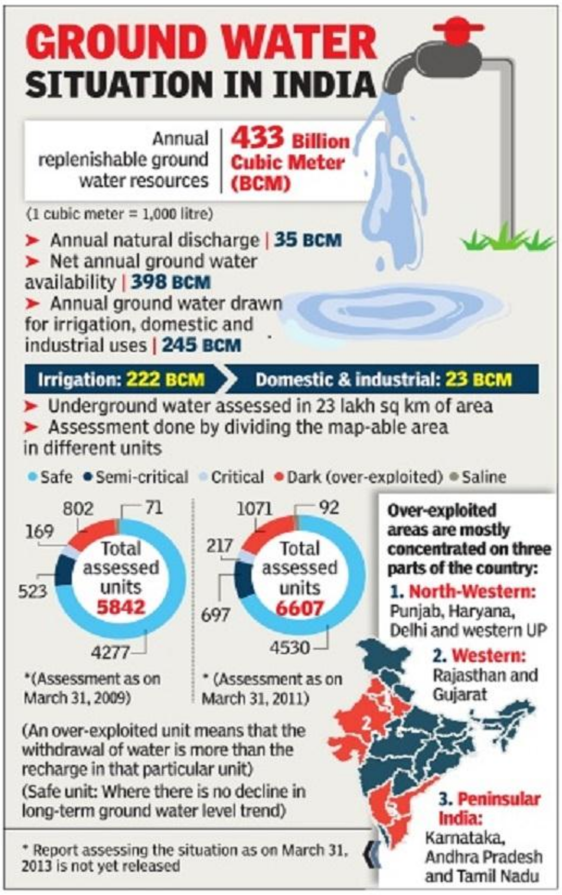

भूजल दोहन क्या है?

- भूजल के दोहन से अभिप्राय सिंचाई, घरेलू और औद्योगीकरण आवश्यकताओं सहित विभिन्न प्रयोजनों के लिए भूजल की अत्यधिक निकासी से है। जिसके परिणामस्वरूप भूजल स्तर में गिरावट आती है।
- वहीं दूसरी ओर, कई क्षेत्रों में परिवर्तित और अनियमित वर्षा प्रतिरूप तथा साथ ही भूमि उपयोग में परिवर्तन के कारण भूजल पुनर्भरण (Groundwater recharge) में कमी आती है।

सरकार द्वारा किये गये प्रयास

सरकार द्वारा राष्ट्रीय जल नीति (2012) तैयार की गई है। इसमें जल संरक्षण, वृद्धि और बचाव पर बल देते हुए वर्षा जल के संचयन, इसके प्रत्यक्ष उपयोग और अन्य प्रबंधन उपायों के माध्यम से जल की उपलब्धता बढ़ाने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है।

- मनरेगा के तहत कुँओं और जलाशयों के निर्माण को प्रोत्साहन- इसकी घोषणा इस वर्ष के बजट भाषण में भी की गई थी।
- विशिष्ट क्षेत्रों में वाटर शेड का विकास; इसके लिए **नीरांचल योजना** प्रारंभ की गई थी।
- **वर्षा जल संचयन**- जागरूकता, ज्ञान, कर प्रोत्साहन, अवसंरचनाओं की सरल उपलब्धता।
- **नेशनल एक्विफ़र मैप**; अवस्थिति आधारित कार्यान्वयन के लिए।

- **भूजल के तर्कसंगत उपयोग**, उचित फ़सल पद्धति, बिजली सब्सिडी को तर्कसंगत बनाना, कृषि वानिकी, सूक्ष्म सिंचाई पद्धतियों आदि को प्रोत्साहन देना।
- **अधिक जागरूकता-** विस्तृत सेवाओं के बेहतर उपयोग के लिए। CGWB ने देश में वर्षा जल संचयन और भूजल के लिए कृत्रिम पुनर्भरण को बढ़ावा देने हेतु देश में अनेक जन जागरूकता कार्यक्रमों का आयोजन किया है।

राष्ट्रीय जल प्रारूप क़ानून (National Water Framework Law)

मसौदा विधेयक- भूजल के संरक्षण, सुरक्षा, विनियमन और प्रबंधन के लिए सरकार द्वारा राष्ट्रीय जल प्रारूप विधेयक एवं मॉडल विधेयक को जारी किया गया। इनका उद्देश्य जल प्रबंधन के कार्य को विकेंद्रीकृत करना और जल के बेहतर इस्तेमाल के लिय पंचायतों एवं ग्राम सभाओं को अधिक शक्ति प्रदान करना है

महत्वपूर्ण विशेषताएं

- नागरिकों को स्वच्छ जल के अधिकार का आश्वासन;
- निगमों और बड़ी संस्थाओं द्वारा भूजल का प्रयोग करने के लिए कठोर नियमों का निर्माण किया गया है। भूमि का स्वामित्व भूजल तक विस्तारित नहीं होता है, यह सामुदायिक स्वामित्व से सम्बंधित उत्पाद है। भूजल एक मुक्त संसाधन के रूप में उपलब्ध नहीं होगा बल्कि समान उपलब्धता तथा सतत प्रयोग के आधार पर एक निश्चित मूल्य पर ही इसका दोहन किया जा सकता है।
- उल्लंघनकर्ता एवं उल्लंघन के स्तर के आधार पर 5000 रूपये से 5,00,000 रूपये तक के जुर्माने का प्रावधान किया गया है।
- जल के अंतिम प्रयोक्ताओं, पंचायतों तथा स्थानीय निकायों को अधिक महत्व

भूजल का प्राथमिकता के अनुसार उपयोग; भूजल के उपयोग में सर्वोच्च प्राथमिकता पीने हेतु जल, स्वच्छता, खाद्य सुरक्षा, आजीविका कृषि, महिलाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति सम्बन्धी आवश्यकताओं को मिलनी चाहिए। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के बाद ही उद्योगों को जलापूर्ति की जानी चाहिए।

- इसके अंतर्गत कम जल गहन फसलों के उत्पादकों को प्रोत्साहन मिलेगा।

भूजल सुरक्षा बोर्ड और भूजल संरक्षण क्षेत्र भी स्थापित किये जाने का प्रावधान है जिनका निरीक्षण राज्य निकायों द्वारा किया जाएगा।

नेशनल हाइड्रोलॉजी प्रोजेक्ट

- इसके तहत जल संसाधन से सम्बंधित डाटा के विश्वसनीय और समयबद्ध प्राप्ति, भंडारण, अध्ययन और प्रबंधन के लिए एक प्रणाली स्थापित की जाएगी
- इसके द्वारा सूचना प्रणाली के उपयोग तथा रिमोट सेंसिंग जैसी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों के उपयोग के माध्यम से राज्य और केंद्रीय संगठनों की जल संसाधन प्रबंधन क्षमता को विकसित करने में मदद मिलेगी।
- यह ग्राम स्तर तक, जल (विशेष रूप से भूजल) के 'कुशल और न्यायसंगत' उपयोग को प्रोत्साहित करेगा और जल की गुणवत्ता के बारे में जानकारी प्रदान करेगा।

1.2.2. गंगा की सफाई

(Cleaning Ganga)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने शिवपुरी से ऋषिकेश तक गंगा के तटों पर निम्न मौसमी प्रवाह के दौरान नदी के मध्य से 100 मीटर की दूरी के भीतर सभी शिविर गतिविधियां निषिद्ध कर दीं है। शिवपुरी से ऋषिकेश तक का क्षेत्र पर्यावरण पर्यटन और रिवर राफ्टिंग का केंद्र है।

गंगा का पुनरुत्थान क्यों महत्वपूर्ण है?

- यह धार्मिक रूप से अत्यधिक महत्वपूर्ण नदी है तथा हिंदुओं की पवित्र नदी मानी जाती है।
- गंगा का अपवाह क्षेत्र लगभग 10 लाख वर्ग किलोमीटर (भारतीय भूभाग का 26%) है।
- यह नदी बेसिन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से विश्व की किसी अन्य नदी की तुलना में सबसे बड़ी आबादी, 53 करोड़ से अधिक लोगों (43% आबादी) को प्रभावित करती है।
- **बिजली उत्पादन:** अकेले गंगा पर ही 4000 मेगावाट की विद्युत् परियोजनाएं स्थापित की गई हैं।

गंगा की सफाई प्रक्रिया का इतिहास

गंगा एक्शन प्लान (GAP) चरण 1 और 2:

- चरण 1 की शुरूआत 1985 में की गई थी। इस चरण में तीन राज्यों में गंगा के तट पर स्थित 25 कस्बों को सम्मिलित किया गया था।
- 1993 में चरण 2 के तहत पांच राज्यों में 59 शहरों को सम्मिलित किया गया।
- यमुना, गोमती, दामोदर, महानंदा जैसी नदियों के लिए पृथक कार्य योजना बनाई गयी।

NGRBA

- 2009 में राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण (NGRBA) की स्थापना की गई।
- यह बेसिन-आधारित रणनीति पर केंद्रित था; इसके तहत पांच राज्यों के 43 शहरों को शामिल किया गया।

राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन

- 12 अगस्त 2011 को राष्ट्रीय स्वच्छ गंगा मिशन (NMCG) को सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1860 के तहत, एक सोसाइटी के रूप में पंजीकृत किया गया था।
- यह राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण (NGRBA) की कार्यान्वयन इकाई के रूप में कार्य करता था।

इन योजनाओं की विफलता के कारण:

- गंगा की सफाई के लिए किए गए प्रयासों की तुलना में जनसंख्या वृद्धि, नगरीकरण, औद्योगीकरण की दर बहुत अधिक।
- सभी हितधारकों के सम्मिलित प्रयास का अभाव।
- योजना जमीनी स्तर पर जनसामान्य के साथ जुड़ने में सक्षम नहीं थी।
- प्रतिदिन के सीवेज डिस्चार्ज और सीवेज ट्रीटमेंट के मध्य क्षमता निर्माण में अंतराल। इसके अतिरिक्त इसकी अधिकांश क्षमता अल्प प्रयुक्त (under utilised) या गैर-कार्यात्मक (non-functional) है।
- नदी को प्रदूषण से मुक्त करने हेतु किए गए हस्तक्षेपों में से शहरी सीवेज डिस्चार्ज केवल एक हस्तक्षेप है।

पृष्ठभूमि

- गंगा की सफाई हेतु शुरू की गई विभिन्न प्रकार की प्रदूषण निवारण योजनाओं को कोर और नॉन कोर स्कीम वर्गीकृत किया जा सकता है।
    - कोर स्कीम में गंगा नदी में सीवेज डिस्चार्ज का अवरोधन एवं विमुखीकरण (Interception and diversion (I&D) और अवरोधित सीवेज के उपचार हेतु ट्रीटमेंट इंफ्रास्ट्रक्चर का निर्माण करना शामिल है।
    - नॉन कोर स्कीम में पूर्व निर्धारित स्थानों पर समुदायिक एवं व्यक्तिगत स्तर पर निम्न लागत युक्त स्वच्छता (Low Cost Sanitation - LCS) प्रदान करना, शवदाह गृहों की स्थापना (विद्युत् शवदाह गृह के साथ-साथ लकड़ी आधारित संशोधित शवदाह गृह) तथा रिवर फ्रंट डेवलपमेंट जिसमें स्नान घाटों, वनीकरण, जैव-विविधता संरक्षण और जन जागरूकता सृजन एवं भागीदारी में वृद्धि इत्यादि सम्मिलित है।

VISION IAS

नमामि गंगे कार्यक्रम

- मई 2015 में केंद्र सरकार ने पांच वर्षों की अवधि के लिए नमामी गंगे कार्यक्रम को मंजूरी प्रदान की थी। इस कार्यक्रम की परिव्यय राशि 20,000 करोड़ रुपए है।
- इस कार्यक्रम के तीन घटक हैं: गंगा की **'अविरल धारा' (निरंतर प्रवाह), 'निर्मल धारा' (स्वच्छ प्रवाह);** और पारिस्थितिक एवं भूवैज्ञानिक अखंडता सुनिश्चित करना है।
- नमामी गंगे कार्यक्रम के तहत निम्नलिखित प्रस्ताव किए गए हैं:
    - जलीय जीवन और जैव विविधता संरक्षण द्वारा पारिस्थितिक कायाकल्प सुनिश्चित करना;
    - उचित एवं संधारणीय तरीके से पर्यटन एवं नौवहन को प्रोत्साहन;
    - गंगा ज्ञान केंद्र के माध्यम से गंगा पर ज्ञान प्रबंधन।

नमामि गंगे कार्यक्रम की कार्य पद्धति/ तंत्र

- **संस्थागत तंत्र**
    - **इस कार्यक्रम का क्रियान्वयन** नेशनल मिशन फॉर क्लीन गंगा (National Mission for Clean Ganga; NMCG) और राज्य कार्यक्रम प्रबंधन समूह (State Program Management Groups; SPMG) द्वारा किया जाएगा।
    - **इस परियोजना की निगरानी के लिए एक त्रि-स्तरीय तंत्र प्रस्तावित है -**
        - राष्ट्रीय स्तर पर कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में एक उच्च स्तरीय कार्यबल जिसे NMCG द्वारा सहायता प्रदान की जाती है।
        - राज्य स्तर पर मुख्य सचिव की अध्यक्षता में राज्य स्तरीय समिति जिसे SPMG द्वारा सहायता प्रदान की जाती है।
        - जिला स्तर पर जिलाधिकारी की अध्यक्षता में जिला स्तरीय समिति।

प्रशासन:

- केंद्र सरकार न्यूनतम 10 वर्ष की अवधि के लिए **कार्यक्रम के संचालन और परिसंपत्तियों के रखरखाव की व्यवस्था** करेगा (पूर्ववर्ती गंगा एक्शन प्लान में ऐसा नहीं था)।
- प्रदूषण हॉटस्पॉट्स के लिए PPP/SPV उपागम को अपनाना।
- अवरोधन (Interception), दिक्परिवर्तन (diversion) और दूषित जल के शोधन जैसे प्रदूषण कम करने के उपायों पर बल दिया जाना। दूषित जल के शोधन में *बायो-रिमेडिएशन*, उपयुक्त *इन-सीटू* ट्रीटमेंट, नवाचार युक्त प्रौद्योगिकियों, *सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट्स* (STPs) और *एफ़्लुएन्ट ट्रीटमेंट प्लांट्स* (ETPs) का उपयोग किया जाना चाहिए।
- गंगा बेसिन में प्रदूषण नियंत्रण की निगरानी के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में ***नेशनल काउंसिल फॉर रिवर गंगा*** का निर्माण किया गया। इस परिषद् का गठन **गंगा नदी प्राधिकरण आदेश 2016 (River Ganga Authorities Order 2016)** के माध्यम से किया गया।

सरकार द्वारा हाल ही में की गयी अन्य पहलें

- **गंगा मंथन** - गंगा की सफाई से संबंधित मुद्दों और संभावित समाधानों पर चर्चा करने हेतु गंगा मंथन नामक एक राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन किया गया।
- **गंगा टास्क फोर्स-** 05 जनवरी, 2016 को केंद्र सरकार ने गंगा टास्क फोर्स बटालियन की पहली कंपनी लॉन्च की जिसे गढ़मुक्तेश्वर में तैनात किया गया।
- **गंगा ग्राम योजना:** इस योजना के तहत गंगा नदी के तट पर स्थित 1600 गांवों को विकसित किया जाएगा।
- '***वाश इन स्कूल***'(WASH in school) कार्यक्रम को लागू करने के लिए रोटरी इंडिया के साथ एक MoU पर हस्ताक्षर किया गया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत लक्षित सरकारी स्कूलों में जल, स्वच्छता तथा *हाइजीन* सेवाओं का कार्यान्वयन शामिल है।

आरम्भ की जा सकने योग्य अन्य पहल

- इन पहलों में जन जागरूकता कार्यक्रम, जलीय जीव विज्ञान का पुनरुद्धार, वृक्षारोपण और रिवरफ्रंट डेवलपमेंट शामिल हैं।
- गंगा बेसिन के लिए GIS डेटा और स्थानिक विश्लेषण।
- वनीकरण - वनस्पति संरक्षण।
- शहरी स्थानीय निकायों का क्षमता निर्माण।
- गंगा पर एक व्यापक कानून भी विधिक समर्थन प्रदान कर सहायता कर सकता है।

गंगा के सफाई कार्यक्रम में बाधाएँ

- नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (NGT) द्वारा उत्तर प्रदेश में सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट्स की परिचालन क्षमता पर प्रश्न उठाते हुए 'अतार्किक' निर्देश जारी करना।जिससे कार्यक्रम के निष्पादन के लिए राज्य सरकारों द्वारा STPs को मंजूरी प्रदान करने में विलम्ब किया गया।
- केंद्र और राज्य सरकारों के बीच समन्वय का अभाव।
- पर्यावरण एवं वन संबंधी संसदीय समिति के अनुसार यह मिशन निम्न कारणों से विफल रहा:
    - नदी के तट पर निवास करने वाले लोगों को शामिल किये बिना गंगा नदी के प्रदूषण को रोकने के लिए सीवेज उपचार संयंत्र बनाने जैसे तकनीकी पहलुओं पर अनुचित निवेश।
    - समिति का मानना है कि नदी प्रदूषण के सामाजिक पहलुओं को नजरअंदाज किया गया है।
    - जलग्रहण क्षेत्रों पर अतिक्रमण कर लिया गया है और उन्हें निर्माण एवं विकास गतिविधियों के लिए परिवर्तित कर दिया गया है।

गंगा प्रदूषण की समस्या का समाधान

(a) शहरी सीवेज का उपचार करना

- उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल से एक साथ प्रति दिन 7,300 मिलियन लीटर सीवेज उत्पन्न होता है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से नदी में प्रवाहित कर दिया जाता हैं।
- सीवेज की समस्या को हल करने के लिए सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट (STP) का निर्माण कार्य पूर्ण करना एक मुख्य कार्य है।
- सरकार ने नदी के किनारे स्थित सभी 118 शहरी केंद्रों में STPs के निर्माण कार्य को पूर्ण करने का निर्णय किया है।

(b) ग्रामीण सीवेज

- लगभग 1,650 ग्राम पंचायत प्रत्यक्ष रूप से गंगा तट पर अवस्थित हैं। इन गांवों की लगभग आधी आबादी खुले में शौच करती है।
- सरकार इस कचरे से निपटने के लिए जैविक तरीकों का इस्तेमाल करने की योजना बना रही है। इस कार्य में सीचेवाल मॉडल का प्रयोग किया जाएगा। सीचेवाल मॉडल में ठोस और तरल अपशिष्टों का पृथक्करण करने, ऑक्सीडेशन पोंड्स (oxidation ponds) के माध्यम से अपशिष्ट जल का उपचार करने, सिंचाई के लिए उपचारित जल का उपयोग, और सामुदायिक भागीदारी एवं नदी स्वामित्व की भावना के साथ ठोस अपशिष्ट द्वारा खाद निर्माण (composting) को प्रोत्साहित किया जाता है।

(c) औद्योगिक बहिःस्त्रावी (Industrial Effluents)

- गंगा के तट पर 764 प्रदूषणकारी उद्योग हैं, इनमें से अधिकांश उत्तर प्रदेश में हैं। इनमें चमड़ा उद्योग, कागज और लुगदी उद्योग, चीनी मिलों, रंगाई कारखाने, भट्टियां और सीमेंट संयंत्र इत्यादि शामिल हैं। इन सभी इकाईयों से नदी में अनुपचारित अपशिष्टों का प्रवाह होता है।
- उद्योगों को कॉमन एफ्लूअन्ट ट्रीटमेंट प्लांट्स (Common effluent treatment plants- CETPs) एवं नई प्रौद्योगिकियों को स्थापित करना चाहिए तथा गंगा में शून्य तरल प्रवाह सुनिश्चित करना चाहिए।

(d) सतही सफाई (Surface Cleaning)

- ठोस अपशिष्ट, कपड़े, पॉलिथीन, और सभी धार्मिक प्रसाद नदी में फेंक दिए जाते हैं जो इसकी सतह पर तैरते रहते हैं।

VISION IAS

- नदी की ऊपरी जलीय सतह को साफ करने के लिए **ट्रैश स्कीमर्स** नामक मशीनों को विदेश से मंगाने का आदेश दिया गया है।

(e) शवदाह

- नदियों के किनारे शवदाह एवं अवशेषों का विसर्जन भारतीय नदियों में, विशेषकर गंगा के प्रदूषण का एक विशेष कारण है। लकड़ी जलाना वायु प्रदूषण का भी एक कारण है।
- विशेष रूप से वाराणसी और इलाहाबाद जैसे धार्मिक स्थलों में गैस या विद्युत शवदाह गृहों के निर्माण की आवश्यकता है।

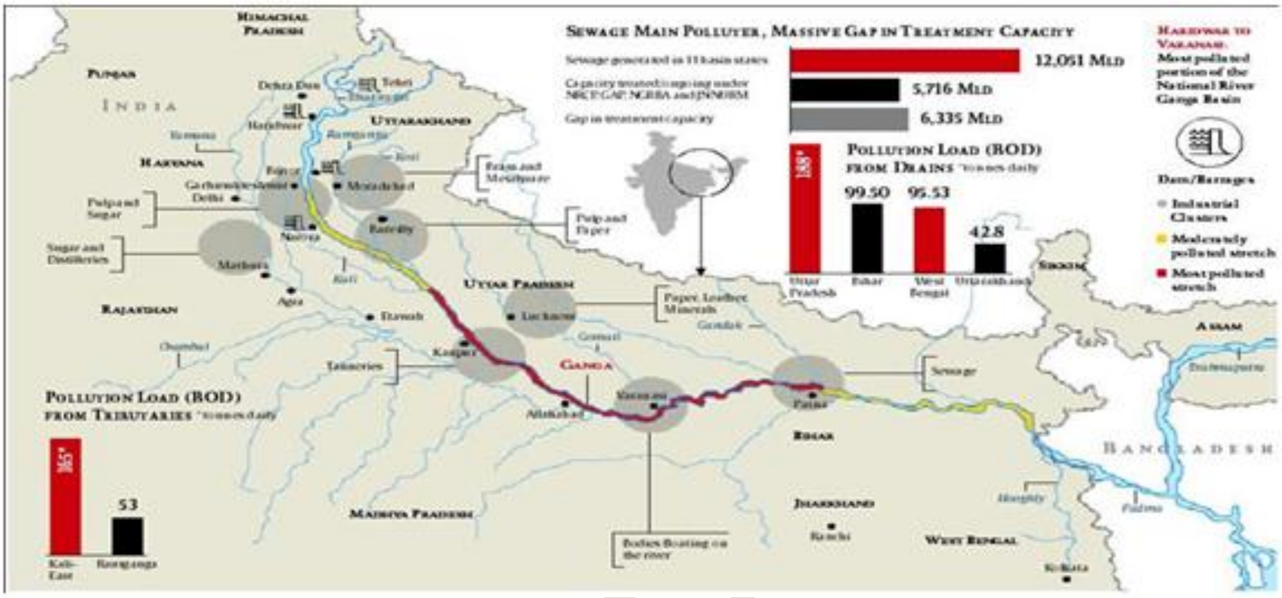

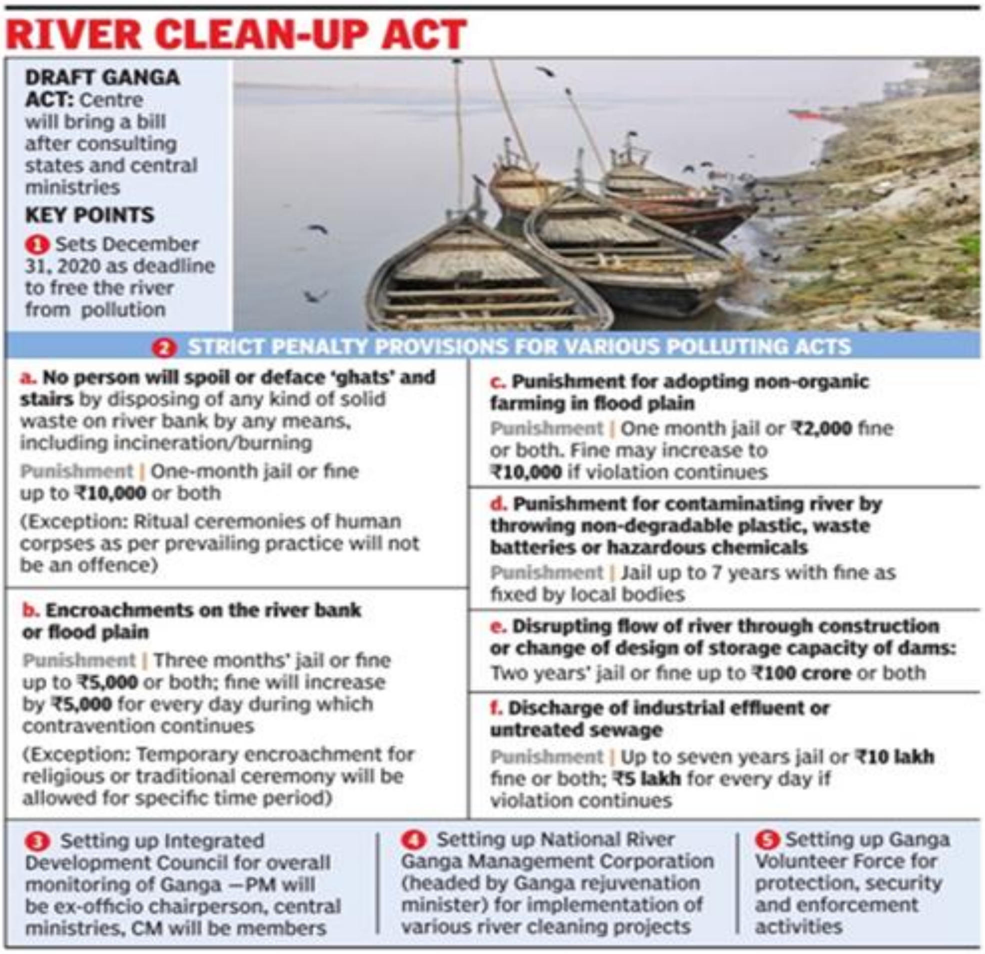

1.2.3. गंगा नदी से सम्बंधित समितियाँ

(Committees Related To Ganga)

पृष्ठभूमि

- 2016 में, सरकार ने गंगा नदी को स्वच्छ बनाने तथा समुचित कानून की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए **दो समितियों** का गठन किया था।
  - **गिरधर मालवीय समिति** को स्वच्छ और निर्बाध प्रवाह युक्त गंगा हेतु एक मसौदा कानून तैयार करने का कार्यभार सौंपा गया।
  - भीमगौड़ा (उत्तराखंड) और फरक्का (पश्चिम बंगाल) के बीच गंगा नदी से अवसादों को हटाने (डी-सिल्टिंग) के लिए दिशा-निर्देश बनाने हेतु **माधव चितले समिति** का गठन किया गया था।
- हाल ही में, उत्तराखंड उच्च न्यायालय ने **गंगा और यमुना को 'जीवित व्यक्ति' का** दर्जा प्रदान किया है, जिसके तहत नदियों की ओर से किसी को भी याचिका दायर करने की अनुमति दी गई है।

गिरधर मालवीय समिति

- समिति ने कुछ ऐसी चुनौतियों की पहचान की है जो गंगा की निर्मलता (स्वच्छता) और अविरलता (निर्बाध प्रवाह) को समग्र रूप से बनाए रखने में बाधक हैं। ये कारक निम्नलिखित हैं:
  - घरेलू, कृषि और औद्योगिक क्षेत्र द्वारा जल की अत्यधिक मांग
  - धार्मिक आस्था, ऐतिहासिक और सामाजिक विश्वास को बनाए रखना,
  - निरंतर बढ़ती माँग की तुलना में नदी मार्ग में जल की उपलब्धता में वृद्धि का न होना,
  - जलवायु परिवर्तन के प्रभावों की आशंका।
- समिति ने एक मॉडल कानून के एक मसौदे को भी प्रस्तुत किया है (बॉक्स में प्रावधान देखें)।

नदी को जीवित व्यक्ति का दर्ज़ा - न्यायालय का निर्णय

- गंगा और यमुना, उनकी सभी सहायक नदियों, यमुनोत्री और गंगोत्री जैसे ग्लेशियर तथा वनों को सभी संबंधित अधिकार, कर्तव्यों और दायित्वों के साथ जीवित इकाई का दर्जा प्रदान किया गया है।
- नमामि गंगे कार्यक्रम के निदेशक, उत्तराखंड के मुख्य सचिव और उत्तराखंड के महाधिवक्ता नदियों के अभिभावक (parents) के रूप में उनकी देखभाल करेंगे।
- जुलाई में उच्चतम न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के इस निर्णय पर रोक लगा दी गयी।

नदियों के संरक्षण संबंधी पूर्व प्रयास (Earlier precedents)

- इससे पहले न्यूजीलैंड ने ते अवा तुपुआ विधेयक (Te Awa Tapua bill) पारित कर **व्हांगनुई (Whanganui)** नदी पारिस्थितिकी तंत्र को जीवित इकाई की मान्यता प्रदान की थी। यह निर्णय नदी के किनारे बसे स्थानीय माओरी लोगों द्वारा किये गए अनवरत प्रयासों के परिणामस्वरूप लिया गया।

महत्व

- चूँकि नदियां हमारे लिए अत्यंत उपयोगी होती हैं, अत: नदियों के अधिकारों को मान्यता सामाजिक-राजनीतिक-वैज्ञानिक विकास की प्रक्रिया में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका तथा इनके आध्यात्मिक महत्व के कारण प्रदान की गई है। लेकिन यह मान्यता नदियों की प्राकृतिक विशेषताओं तथा इनके समग्र पारिस्थितिक तंत्र का एक भाग होने के कारण प्रदान की जानी चाहिए।
- चूंकि अब इन नदियों को विधिक रूप से जीवित व्यक्ति का दर्जा प्राप्त है अत: नदी एवं अन्य जलधाराओं द्वारा निजी अथवा सार्वजनिक संपत्ति को क्षति पहुँचाए जाने पर संभवत: इन नदियों के खिलाफ कानूनी मुकदमों की जटिलताएं उत्पन्न हो सकती हैं।

महत्व

- गंगा को प्रदूषित करने के व्यक्तिगत कृत्यों के लिए निर्धारित दंड से युक्त एक कानून प्रदूषणकारियों को नदी में प्रदूषण फैलाने से रोकेगा।
- विशिष्ट समयबद्ध लक्ष्य, सरकार को नदियों की सफाई की योजना बनाने में प्रभावी रूप से सक्षम बनाएगा।
- उच्च न्यायालय के लिविंग रिवर्स घोषित करने वाले निर्णय के साथ मिलकर यह क़ानून संयुक्त रूप से सरकार को गंगा की सफाई हेतु उत्तरदायी ठहराने के लिए न्यायिक प्रक्रिया को सरल करेगा।

चुनौतियाँ

- मसौदा कानून कुछ अपवाद निर्धारित करने का प्रयास करता है। इन अपवादों की व्यक्तिनिष्ठता (subjectiveness) के कारण उनकी निगरानी करना कठिन हो सकता है।
- सिविल सोसाइटी को भी निगरानी और कार्यान्वयन प्रक्रिया में भागीदारी करने की आवश्यकता है। इस विषय पर ड्राफ्ट कानून में स्पष्ट रूप से कोई प्रावधान नहीं किया गया है।

चितले समिति की अनुशंसाएँ:

- समिति के अनुसार **तलछट प्रबंधन और नियंत्रण के लिए एक सामान्य दृष्टिकोण (one-size-fits-all approach) उचित नहीं** है, क्योंकि नदी में तलछट की मात्रा पर क्षेत्रीय रूप से विशिष्ट मुद्दों जैसे स्थलाकृति, नदी नियंत्रण संरचनाएँ, मृदा व जल संरक्षण उपाय, वृक्षावरण और नदी तट की भूमि का उपयोग या उसमे फेरबदल (उदाहरण के लिए कृषि, खनन आदि) जैसे स्थानीय कारकों का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है ।
- समिति की अनुसंशाएँ निम्नलिखित हैं:
    - डी-सिल्टिंग गतिविधियों को संचालित करने के लिए वार्षिक सेडीमेंट बजट (sediment budgets) के साथ-साथ नदी द्वारा जहां तक अवसाद का परिवहन किया जा रहा, उसका अध्ययन करना।
    - पूर्ववर्ती डी-सिल्टिंग (अवसाद हटाने)/तलकर्षण (dredging) गतिविधियों का विवरण प्रदान करने वाली **एक वार्षिक रिपोर्ट (सैंड रजिस्ट्री)** तैयार करना।
    - किसी **तकनीकी संस्थान को सेडीमेंट बजट**, नदी के आकार सम्बन्धी तथा बाढ़ मार्गों के अध्ययन का कार्य सौंपा जाना चाहिए। इससे नदी विस्तार की डी-सिल्टिंग की आवश्यकता का परीक्षण और उस पर अंतिम निर्णय लिया जा सकेगा।
    - धारा के प्रवाह में बेहतरी से जुड़े कार्य शुरू करने के लिए नदी आकारिकी संबंधी अध्ययन किए जाने चाहिए।
- **जलग्रहण क्षेत्र उपचार (कैचमेंट एरिया ट्रीटमेंट) और जलसम्भर विकास (वाटरशेड डेवलपमेंट) कार्यों** के साथ-साथ उत्तम कृषि पद्धतियाँ और नदी तट का संरक्षण भी गाद के अन्तःप्रवाह को कम करने के लिए आवश्यक हैं।
- **'गाद हटाने' की बजाय "गाद के लिये रास्ता दें" की रणनीति** अपनायी जानी चाहिए।
- यदि नदियों के संकुचित होने के कारण व्यापक पैमाने पर गाद जमा हो रही हो, तो ऐसी स्थिति में पूर्व चयनित प्रवाह मार्ग से गाद हटाकर धारा के प्रवाह को आकर्षित करने एवं तीव्र करने का प्रयास किया जा सकता है। इस प्रकार नदी की मुख्य धारा को सही दिशा दी जा सकती है।
- संगम स्थलों को गादमुक्त बनाना आवश्यक है, विशेषकर उन सहायक नदियों के संगम स्थलों को जो अपेक्षाकृत अधिक गाद लाती हैं, जैसे- घाघरा, सोन आदि। इससे संगम स्थलों में अबाध जलप्रवाह (hydraulically efficient) सुनिश्चित किया जा सकेगा।
- गंगा नदी के अवसाद प्रबंधन पर आवश्यक अध्ययन करने के लिए गंगा बाढ़ नियंत्रण आयोग को अतिरिक्त अधिकार सौंपे जाने चाहिए।

महत्व:

- यदि समिति की सिफारिशें लागू की जाती हैं तो नदी के हाइड्रोलिक परफोर्मंस (hydraulic performance) में सुधार हो सकता है और यह नदियों पर प्रदूषण के प्रभाव को कम करने की दिशा में भी एक समाधान सिद्ध हो सकता है।

- नदी के उपर्युक्त भाग को गादमुक्त करने से नौपरिवहन सरल होगा। नदी परिवहन के प्रोत्साहन से प्रदूषण में कमी, रोज़गार में वृद्धि आदि जैसे अन्य गौण लाभ भी प्राप्त होंगे।

चुनौतियाँ:

गादमुक्त करने से कुछ प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं, यथा नदी तल का नीचे की ओर जाना (River bed degradation), तट का कटाव (Bank erosion), प्रवाह का चौड़ा होना (channel widening), नदी प्रवाह में उथले जल स्तर का नीचे की ओर आना इत्यादि। इन दुष्प्रभावों को अधिकतम सीमा तक रोका जाना चाहिए।

1.3. ई - अपशिष्ट

[E-Waste]

पर्यावरण, वन तथा जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने ई-कचरा (प्रबंधन तथा निपटान) नियम, 2011 के अधिक्रमण में ई-कचरा प्रबंधन नियम, 2016 को अधिसूचित किया है।

भारत में ई-अपशिष्ट की स्थिति

- भारत विश्व में ई-अपशिष्ट का पाचवां सबसे बड़ा उत्पादक है। एसोचेम-KPMG द्वारा किए गए संयुक्त अध्ययन से पता चला है कि प्रत्येक वर्ष भारत से लगभग 18.5 लाख मीट्रिक टन ई-अपशिष्ट निकल रहे हैं।
- इस अपशिष्ट में अकेले केवल दूरसंचार क्षेत्र का 12 % योगदान है। प्रतिवर्ष लगभग 25 % मोबाइल फोन चलन से बाहर हो कर ई-अपशिष्ट के रूप में बदल जाते हैं।
- देश के ई-अपशिष्ट के 95 प्रतिशत से अधिक हिस्से का निपटान असंगठित क्षेत्र द्वारा किया जाता है। वे इस अपशिष्ट के निपटारे की प्रक्रिया में अवैज्ञानिक पद्धतियों का प्रयोग करते हैं जो पर्यावरण तथा स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक हैं। नए नियमों से इन पर नियंत्रण रखने में मदद मिलेगी।

नए नियम की मुख्य विशेषताएं

व्यावहरिकता

- इससे पहले यह केवल उत्पादकों और उपभोक्ताओं, विघटनकर्ताओं (Dismantlers) और पुनःचक्रणकर्ताओं (recyclers) पर लागू था। अब इसे निर्माता, व्यापारी, नवीकरणकर्ताओं (refurbishers) और उत्पादक दायित्व संगठन (Producer Responsibility Organisation: PRO) तक बढ़ा दिया गया है। इससे अनौपचारिक क्षेत्र के लिए ई-अपशिष्ट के रिसाव को रोकने में मदद मिलेगी।
- इससे पहले केवल इलेक्ट्रिक और इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को कवर किया गया था। अब उनके घटकों (components) और स्पेयर पार्ट्स को भी कवर किया गया है। कंपैक्ट फ्लोरेसेंट लैम्प (CFL) तथा मरकरी वाले अन्य लैम्प और ऐसे अन्य उपकरण भी शामिल किए गए हैं।

विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (Extended Producers' Responsibility: EPR)

- विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (EPR) एक ऐसी रणनीति है, जो किसी उत्पाद के सम्पूर्ण जीवन काल के दौरान आई पर्यावरणीय लागत और उसके बाजार मूल्य को एकीकृत करने को प्रोत्साहित करती है ।
- संपूर्ण भारत में कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए उत्पादकों के लिए एकल EPR अनुमोदन को अब CPCB की जिम्मेदारी बनाया जा रहा है। इसके अलावा, EPR प्रावधानों के कार्यान्वयन में सरलता के लिए लचीला रुख अपनाया गया है। ई-अपशिष्ट के संबंध में सही दिशा निर्धारण हेतु PRO की स्थापना, ई-अपशिष्ट विनिमय, ई-रिटेलर, जमा वापसी योजना जैसे विकल्प उत्पादकों को दिए गए हैं।

जमा वापसी योजना एक अतिरिक्त आर्थिक साधन के रूप में शुरू की गयी है।

VISION IAS

- **ई-वैस्ट एक्सचेंज** के तहत, स्वतंत्र कंपनियाँ जीवन-काल समाप्त हो चुकी की क्रय और विक्रय सेवाओं की पेशकश कर सकती हैं।
- संग्रहण अब उत्पादक की अनन्य जिम्मेदारी है। इसके लिए अलग से किसी अनुमोदन की आवश्यकता नहीं होगी जैसा कि पूर्व में आवश्यक था।
- संग्रहण के लिए एक लक्ष्य आधारित दृष्टिकोण अनिवार्य कर दिया गया है। प्रथम चरण में यह उत्पन्न कचरे की मात्रा का 30% है और अंततः 7 वर्ष में इसे 70% तक किया जायेगा।
- **बड़े उपभोक्ताओं का उत्तरदायित्व:** इन्हें अनिवार्य रूप से वार्षिक रिटर्न फाइल करना है। स्वास्थ्य सुविधाओं को परिभाषा में जोड़ा गया है।
- **राज्य सरकार की भागीदारी:** नियमों के प्रभावी आरोपण और इसके साथ ही ई-अपशिष्ट प्रबंधन के क्षेत्र में लगे श्रमिकों का कल्याण, सुरक्षा तथा स्वास्थ्य सुनिश्चित करने की भूमिका राज्य सरकारों की है ।
- विनिर्माण चरण के दौरान खतरनाक पदार्थों में कमी (Reduction of Hazardous Substances :RoHS)) लाने के प्रावधानों को मौजूदा यूरोपीय संघ के नियमों के अनुरूप बनाया गया है। गैर-अनुपालन के मामले में उत्पाद को हटाने और उसे वापस लेने का भी एक प्रावधान जोड़ा गया है।

चुनौतियां

- पुनर्चक्रण क्षमता में वृद्धि करने की आवश्यकता है। वर्तमान में यह क्षमता उत्पन्न अपशिष्ट के केवल आधे भाग का ही पुनर्चक्रण करने में सक्षम है।
- शहरों में जहाँ विभिन्न प्रकार के ई-अपशिष्ट को आपस में मिश्रित कर दिया जाता है वहाँ ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के लिए कचरे को पृथक करने की प्रक्रिया में सुधार करना होगा।
- काम में नहीं लिए जाने वाले निष्क्रिय गैजेट्स को संभाल कर रखने और उन्हें अपने से अलग न करने की भारतीय परिवारों की आदत।

ई-अपशिष्ट नियम 2011 का मूल्यांकन

- **औपचारिक क्षेत्र का विकास:** केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के अनुसार, पंजीकृत (विनियमित) अपशिष्ट प्रसंस्करण इकाइयों की संख्या 23 से बढ़कर 150 हो गई है। इस वृद्धि के बावजूद, औपचारिक क्षेत्र के माध्यम से केवल औसतन 5-15% ई-अपशिष्ट का ही निस्तारण किया जा रहा है।
- **EPR प्रदर्शन:** हालांकि अधिकांश विनिर्माताओं के द्वारा इसके बारे में जानकारी प्रदान की गयी है कि उपयोग किए गए उपकरणों को कैसे वापस किया जाए, किन्तु जमीनी स्तर पर इसका क्रियान्वयन नहीं हो पाया है।
- **उपभोक्ताओं में जागरूकता का अभाव :** उपभोक्ता पक्ष की ओर देखें तो, लगभग 70% ई-अपशिष्ट का उत्पादन करने वाले शैक्षणिक संस्थान, उद्योग आदि जैसे अधिकांश संस्थागत अपशिष्ट उत्पादकों को इन नियमों की जानकारी नहीं हैं और वे अपने ई-अपशिष्ट को अनौपचारिक क्षेत्र को बेच रहे हैं। कुल मिलाकर, ई-अपशिष्ट के नियमों का प्रभाव निराशाजनक रूप से सीमित रहा है।

नियम प्रभावी क्यों नहीं हैं?

- अन्य देशों के EPR नियमों के विपरीत, उत्पादकों के लिए कोई संग्रहण या पुनर्चक्रण लक्ष्य निर्धारित नहीं किए जाते हैं। लक्ष्य की अनुपस्थिति और अपेक्षाकृत शिथिल नियामकीय परिवेश के कारण उत्पादकों को अपने प्रयुक्त उत्पादों के संग्रहण को सुनिश्चित करने के लिए बहुत कम प्रोत्साहन दिया जाता है।
- **उपभोक्ता जागरूकता का अभाव**: केवल पर्यावरण के प्रति अत्यधिक जागरूक उपभोक्ता ही निकटतम संग्रह केन्द्रों की तलाश करते हैं। दूसरी ओर, कचरा उठाने वाले (रैग-पिकर) कचरा लेने के लिए उपभोक्ता के घर पर आते हैं और इस कचरे के बदले वे उपभोक्ताओं को भुगतान भी करते हैं।

VISION IAS

- औपचारिक योजना बनाते समय अनौपचारिक क्षेत्रों की उपेक्षा करना।

आगे की राह

इस विशाल अनौपचारिक क्षेत्र को औपचारिक अपशिष्ट प्रसंस्करण उद्योग के साथ एकीकृत करने की आवश्यकता है। सरकार और निर्माताओं को अनौपचारिक क्षेत्र की पहचान करनी होगी तथा इसे औपचारिक अपशिष्ट प्रबंधन में शामिल करने हेतु समाधान तलाशने होंगे। वर्तमान में किये जा रहे कुछ प्रयासों के परिणाम यह समझने में हमारी मदद करेंगे कि सफल अपशिष्ट प्रबंधन में सभी हितधारकों को किस प्रकार सम्मिलित किया जा सकता है।

1.4. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन

(Solid Waste Management)

1.4.1. प्लास्टिक प्रदूषण

(Plastic Pollution)

A. नवीन प्लास्टिक कचरा प्रबंधन नियम

सुर्खियों में क्यों?

सरकार ने 2016 में प्लास्टिक अपशिष्ट (प्रबंधन और प्रचालन) नियम, 2011 में संशोधन किया है।

प्रमुख परिवर्तन

- **प्लास्टिक कैरी बैग की न्यूनतम मोटाई** 40 माइक्रोन से बढ़ाकर 50 माइक्रोन कर दी गयी है। इससे लागत में वृद्धि होगी जो मुफ्त में कैरी बैग प्रदान करने की प्रवृत्ति को नियंत्रित करेगी।
- **स्थानीय निकायों की जिम्मेदारी: संशोधन के द्वारा इन नियमों को** ग्रामीण क्षेत्रों में भी लागू किया गया है क्योंकि प्लास्टिक अब ग्रामीण क्षेत्रों में भी पहुँच चुकी है। इसके क्रियान्वयन की ज़िम्मेदारी ग्राम सभा को सौंपी गयी है।
- **उत्पादकों के उत्तरदायित्वों में वृद्धि:** इससे पहले EPR को स्थानीय निकायों के विवेक पर छोड़ दिया जाता था। संशोधन के द्वारा पहली बार उत्पादकों और ब्रांड मालिकों को उनके उत्पादों से उत्पन्न अपशिष्ट को एकत्र करने के लिए उत्तरदायी निर्धारित किया गया है।
- **रिकॉर्ड रखना:** उत्पादकों को अपने उन *वेंडर्स* के रिकॉर्ड रखने होंगे जिन्हें वे विनिर्माण हेतु कच्चे माल की आपूर्ति करते हैं। इससे **असंगठित क्षेत्र द्वारा प्लास्टिक उत्पादों के विनिर्माण को नियंत्रित किया जा सकेगा।**
- **अपशिष्ट उत्पादकों का उत्तरदायित्व:** प्लास्टिक अपशिष्ट के सभी संस्थागत उत्पादक इन नियमों के अनुसार अपने द्वारा उत्पन्न अपशिष्ट का एकत्रण एवं संग्रहण करेंगे। वो पृथक किये गए अपशिष्ट को प्राधिकृत अपशिष्ट निपटान एजेंसियों के पास भेजेंगे।
- ***स्ट्रीट वेंडर्स* और खुदरा विक्रेताओं का उत्तरदायित्व:** इन्हें कैरी बैग प्रदान करने की अनुमति नहीं दी गयी है। यदि ये ऐसा करते हैं तो इन पर जुर्माना लगाया जायेगा। अब केवल पंजीकृत दुकानदारों को ही स्थानीय निकायों को पंजीकरण शुल्क के भुगतान के बाद उचित मूल्य पर प्लास्टिक बैग प्रदान करने की अनुमति है।
- सड़क निर्माण अथवा ऊर्जा प्राप्ति हेतु प्लास्टिक के उपयोग को प्रोत्साहित करना।

प्लास्टिक बैग पर प्रतिबंध क्यों नहीं?

पर्यावरण मंत्रालय के अनुसार अब तक ऐसा कोई पर्यावरण अनुकूल उत्पाद नहीं खोजा गया है जो सभी प्रकार के प्लास्टिक उपयोगों को पूर्णतः प्रतिस्थापित कर सके। उपयुक्त विकल्प के अभाव में पूरे देश में प्लास्टिक के उपयोग पर एक समान प्रतिबंध लगाना अव्यावहारिक और अवांछनीय होगा।

VISION IAS

प्लास्टिक प्रदूषण: संक्षेप में

कारण:

- **पुराने कचरे के ढेर:** कचरे के ढेर तथा *लैंडफिल* सरीखी अपशिष्ट निपटान की पारंपरिक पद्धतियाँ समस्या का गंभीर कारण हैं। इनके माध्यम से प्रदूषक सतह के भीतर प्रवेश कर जाते हैं तथा भूजल प्रदूषित हो जाता है। इसके साथ ही यह वन्यजीवों को भी हानि पहुँचाता है।
- **अत्यधिक प्रयोग:** कम कीमत के कारण प्लास्टिक वर्तमान में सबसे व्यापक रूप से उपलब्ध और अत्यधिक प्रयोग की वस्तुओं में से एक है। यह आसानी से विघटित नहीं होता है तथा खुली वायु में जलाने पर आस-पास की भूमि और वायु को प्रदूषित करता है।
- व्यावसायिक मत्स्यन में प्लास्टिक के जाल का उपयोग होता है।

प्रभाव:

(a) समुद्री प्रदूषण

- *फोटोडिग्रेडेशन* की प्रक्रिया में प्लास्टिक इतने सूक्ष्म रूप में विघटित हो जाता है कि जलीय जीव सरलता से इसका अंतर्ग्रहण कर लेते हैं तथा यह खाद्य श्रृंखला में प्रवेश कर जाता है।
- जल की सतह पर तैरता मलबा (floating debris) समुद्रीजल से PCBs, DDT जैसे कार्बनिक प्रदूषकों को अवशोषित कर सकता है।
- आक्रामक प्रजातियाँ तैरते हुए प्लास्टिक के माध्यम से बहकर लम्बी दूरी तय कर लेती हैं तथा एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में पहुँच जाती हैं। इसके फलस्वरूप अन्य पारिस्थितिक तंत्रों में उनकी संख्या में अतिशय वृद्धि होने लगती है।
- *मैक्रोस्कोपिक* स्तर पर (अपेक्षाकृत बड़े आकार के) प्लास्टिक के टुकड़े मछलियों, पक्षियों तथा कछुओं की मृत्यु का कारण बनते हैं क्योंकि उनका पाचनतंत्र इस प्लास्टिक का अपघटन नहीं कर पाता।
- कुछ प्लास्टिक जल में *बिस्फेनोल ए* और *पॉलीस्टायरीन* जैसे विषाक्त रसायनों का निक्षालन कर सकते हैं।

(b) सतह पर पड़ा मलबा (*लैंड फिलिंग*)

- यह स्थलीय जीवों के लिए हानिकारक है क्योंकि इससे निकलने वाली गैसों का अंतर्ग्रहण (Ingestion) घुटन और मौत का कारण बनता है।
- *लैंडफिल* पानी के स्रोतों को प्रदूषित करता है तथा जलनिकास में रुकावट होने से वर्षा के समय बाढ़ का कारण बनता है।

(c) वायु प्रदूषण

- प्लास्टिक के जलने से हानिकारक विषाक्त पदार्थ उत्पन्न होते हैं जो वायु को प्रदूषित करते हैं।

(d) पशुओं/वन्यजीवों पर प्रभाव:

- पशुओं द्वारा प्लास्टिक खाने पर उनकी मृत्यु हो सकती है।

B. माइक्रोप्लास्टिक

माइक्रोप्लास्टिक क्या हैं?

माइक्रोप्लास्टिक प्लास्टिक के कण या रेशे हैं जो बहुत सूक्ष्म होते हैं। इनका आकार सामान्यत: 1 मि.मी. से कम होता है। इनकी उत्पत्ति के स्रोत सौंदर्य प्रसाधन, वस्त्र और औद्योगिक क्रिया-कलाप आदि हो सकते हैं।

- प्राथमिक माइक्रोप्लास्टिक मानव द्वारा प्रयुक्त उत्पादों और सामग्रियों से ही निर्मित होते हैं और ये इनके प्रत्यक्ष परिणाम होते हैं। द्वितीयक माइक्रोप्लास्टिक बड़े प्लास्टिक अवशेषों के सूक्ष्म प्लास्टिक कणों में विघटित होने से प्राप्त होते हैं। दोनों प्रकार के माइक्रोप्लास्टिक पर्यावरण में उच्च स्तर में विद्यमान रहते हैं।
- चूंकि ये कई वर्षों तक विघटित नहीं होते हैं, अत: ये विभिन्न जीवों के शरीर में और उनके ऊतकों में प्रवेश कर सकते हैं और इनमे संचित हो सकते हैं।

स्रोत: माइक्रोप्लास्टिक कूड़े (प्लास्टिक की थैलियों आदि) के माध्यम से महासागरों में प्रवेश करते हैं। माइक्रोबीड एक अन्य स्रोत है, ये कठोर प्लास्टिक के छोटे कण हैं जिन्हें सौंदर्य प्रसाधनों में प्रयुक्त किया जाता है। पर्यावरण में माइक्रोप्लास्टिक के संचरण का सम्पूर्ण चक्र अभी तक ज्ञात नहीं है।

STAINED SPARKLE?

Risks associated with exfoliating agents used in personal care products has alarmed green panel

What are microbeads?

Microbeads are plastic pieces or fibre measuring less than 1 mm

What are microbeads made of?

Microbeads used in personal care products are mainly made of polyethylene (PE), but can be also be made of polypropylene (PP), polyethylene terephthalate (PET), polymethyl methacrylate (PMMA) and nylon

What are they mainly used in?

They are widely used in cosmetics as exfoliating agents and in personal care products such as toothpaste, as well as in biomedical and health science research. In layman's language, these microbeads are so small that a person can barely feel them. Their roundness and particle size create a ball-bearing effect in creams and lotions, resulting in a silky texture and spread ability

Why is it used?

Microbeads have been used to replace natural exfoliating materials. Microspheres in different colors add visual appeal to cosmetic products because of which their usage is becoming more rampant

What is the danger from them?

Microbeads — largely non-biodegradable — flow through sewer systems and end up in seas and oceans, where they contribute to the huge chunk of plastic soup in the environment

Microbeads are also likely to be transported to wastewater treatment plants. Due to their small size, a substantial proportion passes through the filtration system and enters aquatic environments

पर्यावरणीय प्रभाव

- इस बात के प्रमाण प्राप्त हुए हैं कि अज्ञात इकोटॉक्सिकोलॉजिकल कारणों से समुद्री जल में माइक्रोप्लास्टिक की मात्रा बढ़ रही है। अध्ययनों से संकेत प्राप्त हुए हैं कि महासागरों में माइक्रोप्लास्टिक से कुछ मछलियों की वृद्धि में कमी हो रही है तथा इनकी मृत्यु हो रही है एवं इनके व्यवहार में परिवर्तन हो रहा है।
- ये बेहद खतरनाक और कैंसरकारी प्रदूषक हैं। यहां तक कि लोग श्वसन द्वारा वायु में निलंबित माइक्रोप्लास्टिक भी ग्रहण कर रहे हैं जो फेफड़ों पर हानिकारक प्रभाव का जोखिम उत्पन्न करते हैं।
- माइक्रोप्लास्टिक से पर्यावरण के एक बार प्रदूषित हो जाने के बाद इसे दूर करने का कोई प्रभावी तरीका नहीं है।
- यह गंभीर जल प्रदूषण का कारण बनता है। एक बार जब ये माइक्रोबीड्स जल निकायों में प्रवेश कर जाते हैं, तो वे पानी में घुल कर अन्य प्रदूषकों के लिए वाहक का कार्य करते हैं।
- नवम्बर 2015 में जारी किए गए शोध अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ है कि खाना पकाने में आवश्यक रूप से प्रयोग होने वाले खाद्य नमक में प्लास्टिक माइक्रोबीड्स विद्यमान रहते हैं। यह भी देखा गया कि टूथपेस्ट में पाए जाने वाले माइक्रोबीड्स हमारे मसूड़ों में फंस सकते हैं और कैंसर का कारण बन सकते हैं।

हाल ही में किये गए हस्तक्षेप

- नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (NGT) ने इन बढ़ते खतरों की पहचान करने और उन्हें रोकने हेतु किये प्रयासों के सम्बन्ध में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय, पर्यावरण और वन मंत्रालय एवं जल संसाधन मंत्रालय को नोटिस जारी किये हैं।

1.4.2. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन

(Solid Waste Management)

पृष्ठभूमि: हाल ही में मुंबई के देवनार लैंडफिल साईट में कई दिनों तक जारी आग से स्थानीय लोगों को गंभीर समस्यों का सामना करना पड़ा।

लैंडफिल तथा नगरीय ठोस अपशिष्ट प्रबंधन

नगरीय ठोस अपशिष्ट (Municipal Solid Waste; MSW) को विभिन्न वर्गों में बांटा जा सकता है। उदाहरण के लिए, खाद्य अपशिष्ट, कूड़ा-कर्कट, वाणिज्यिक अपशिष्ट, संस्थागत अपशिष्ट, सड़कों की सफाई में एकत्र अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट, निर्माण और विध्वंस अपशिष्ट तथा गंदे नालों के अपशिष्ट।

VISION IAS

विश्व बैंक के अनुसार, नगरीय ठोस अपशिष्ट प्रबंधन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें सभी शहरी जनसंख्या समूहों द्वारा उत्पन्न ठोस अपशिष्ट का संग्रह और उसका निपटान पर्यावरण और सामाजिक रूप से संतोषजनक ढंग से और सबसे किफायती तौर पर उपलब्ध साधनों का उपयोग करते हुए किया जाता है।

भारत में प्रबंधन प्रणाली:

- नगरीय ठोस अपशिष्ट प्रबंधन से संबंधित नियमों और शर्तों को केन्द्र सरकार द्वारा पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत निर्धारित किया गया है।
  सरकार ने 2016 में शहरी ठोस अपशिष्ट (प्रबंधन एवं रखरखाव) नियम जारी कर सभी शहरी स्थानीय निकायों के लिए ठोस अपशिष्ट का प्रबंधन आवश्यक बना दिया।
- वायु तथा जल की गुणवत्ता आदि के संबंध में मानकों के अनुपालन की निगरानी केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा की जाती है।
- कचरे के प्रबंधन की जिम्मेदारी संबंधित नगर निगमों पर है -
  - **वे घरेलू अपशिष्ट, निर्माण के दौरान निकले मलबे, सार्वजनिक कूड़ेदानों में एकत्रित कचरे तथा अन्य सभी प्रकार के अपशिष्ट एकत्रित करते हैं।**
  - कुछ शहरों में नगर निगम सभी गतिविधियों का कार्यान्वयन करते हैं, जबकि दूसरों में जैसे कि चेन्नई और बेंगलुरू में संग्रह और पृथक्करण का कार्य निजी ठेकेदारों को दिया जाता है।

वर्तमान स्थिति

- 12 वर्ष के बाद भी अधिकांश शहरों ने खुद को ठोस कचरे के संग्रह और परिवहन तक ही सीमित रखा है। केवल कुछ मामलों में ही प्रसंस्करण और सुरक्षित निपटान का प्रयास किया जाता है।
- CPCB रिपोर्ट से यह भी पता चलता है कि देश में उत्पन्न MSW का केवल 68% ही एकत्र किया जाता है। इसमें से 28% का उपचार नगरपालिका प्राधिकरणों द्वारा किया जाता है। इस प्रकार वर्तमान में कुल कचरे का मात्र 19% ही उपचारित हो पाता है।

मुद्दे:

- **विभिन्न अपशिष्ट का पृथक्करण उद्भव स्रोत पर नहीं किया जाना तथा असंगठित पृथक्करण**: सामान्य रूप से, 50% से अधिक अपशिष्ट का अलगाव और कम्पोस्टिंग का काम शुरुआती चरण में ही किया जा सकता है। पुन: चक्रण (Recycling) के बाद, केवल 10-15% अपशिष्ट डंपिंग ग्राउंड के लिए छोड़ दिया जाना चाहिए। हालांकि, भारतीय शहरों में ऐसा नहीं किया जाता है।

लैंडफिल प्रबंधन से जुड़े मुद्दे:

- लैंडफिल की उपयुक्त अवस्थिति के संदर्भ में आवश्यक नियमों के उलंघन के साथ-साथ अनिवार्य सुरक्षा ढाँचा, जैसे परिसर की दीवारें, सीसीटीवी कैमरे, अग्निशमन उपकरण,पानी के टैंक और कूड़ा बीनने वालों से सम्बंधित नियमों का उल्लंघन।
- आकस्मिक आग जो वायु की गुणवत्ता और स्वास्थ्य को प्रभावित करती है जैसे- मीथेन उत्सर्जन।
- कई लैंडफिल निर्धारित समय सीमा को पार कर चुके हैं, परंतु अभी भी उन पर कचरा डालने का काम जारी है।
- शहरों के विस्तार के साथ, कचरा भरने की पुरानी जगहों का पुन: प्रयोग करने के साथ-साथ नए स्थलों की पहचान करने की जरूरत है ।
- वैकल्पिक स्थानों के लिए मांग नगर निगम और राज्य सरकारों के बीच के संघर्ष में उलझ जाती है क्योंकि यह राज्य सरकारों से जुड़ा मसला होता है।

प्रसंस्करण सुविधा:

- कम्पोस्टिंग तथा अपशिष्ट से ऊर्जा बनाने वाले संयंत्र अपनी पूरी क्षमता का प्रयोग नहीं कर रहे हैं।
- कचरा प्रसंस्करण सुविधा के लिए कई नई परियोजनाए अवरुद्ध हैं।

VISION IAS

- वित्तीय समस्याएं।
- नम कचरे से कम्पोस्ट बनाने की सुविधाएं हर जगह मौजूद नहीं है।
- जागरूकता की कमी के कारण अपशिष्ट प्रबंधन के प्रति **नागरिकों की उदासीनता** तथा **सामुदायिक भागीदारी का अभाव**।

पूर्ववर्ती योजना आयोग को प्रस्तुत कस्तूरीरंगन रिपोर्ट ने एक एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता पर प्रकाश डाला है, जिसमें सम्मिलित हैं:

- **5Rs का सिद्धान्त:** कम करना (**R**educe), पुन: उपयोग (**R**euse), पुनर्प्राप्ति (**R**ecover), पुनर्चक्रण (**R**ecycle) तथा पुनर्निर्माण (**R**emanufacture) (**5Rs**) का सिद्धांत अपनाया जाना चाहिए।
- *रेजिडेंट वेलफेयर एसोसिएशन* (RWAs), CBOs/ NGOs को सामुदायिक जागरूकता तथा *डोर-टू-डोर* संग्रह के कार्य को बढ़ावा देने के लिए प्रेरित करना।
- MSWM प्रणाली में कबाड़ीवालों तथा कूड़ा बीनने वालों को शामिल करना।
- यह इस बात पर बल देता है कि उत्पन्न कचरे की मात्रा व उसकी किस्म (quality) तथा प्रसंस्करण प्रौद्योगिकी की वित्तीय व्यवहार्यता को ध्यान में रखते हुए केंद्रीकृत (जलाया जाना, गैसीकरण, पायरोलिसिस) या विकेंद्रीकृत (बायोरिमेडिएशन, वर्मीकपोस्टिंग) अपशिष्ट प्रसंस्करण सुविधाओं की स्थापना की जाए।
- **दुर्घटनाओं को रोकने के लिए लैंडफिल मैनेजमेंट के लिए मानक प्रोटोकॉल**: भूमि की आवश्यकता को कम करने के लिए **कॉमन रीजनल सैनिटरी लैंडफिल फैसिलिटी** की स्थापना की जाए। दस लाख से ज्यादा की आबादी वाले नगरों को अपने लैंडफिल का निर्माण करना चाहिए और अपने आसपास 50 किमी परिधि के भीतर के सभी शहरों और कस्बों को उसका प्रयोग करने की अनुमति दे देनी चाहिए।

हाल ही में उठाए गए कदम:

- सभी विद्युत वितरण कंपनियों के लिये ठोस अपशिष्ट से उत्पादित ऊर्जा खरीदना अनिवार्य कर दिया गया है।
- सभी निजी उर्वरक कंपनियों को ठोस अपशिष्ट से बने कम्पोस्ट को खरीदना अनिवार्य कर दिया गया है।
- कंपनियों द्वारा केंद्रीय निगरानी समिति के निर्देशों का उल्लंघन करने की दशा में प्रयोक्ता शुल्क के साथ-साथ **स्पॉट-फाइन** पेनाल्टी का भी प्रावधान है।

इन कदमों का महत्व:

- **वैकल्पिक ऊर्जा:** यह अगले पांच वर्षों में ठोस अपशिष्ट संयंत्रों से 700 MW विद्युत उत्पन्न करने के केंद्र के उद्देश्य को साकार करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।
- **ठोस कचरे का प्रभावी निपटान** - प्रतिदिन देश में करीब 1.68 लाख टन ठोस अपशिष्ट एकत्र किया जाता है ।
- अपशिष्ट से ऊर्जा बनाने वाले संयंत्रों तथा कम्पोस्ट का उत्पादन करने वाले **संयंत्रों को बढ़ावा** मिलेगा। तथा यह देश में इस प्रकार के अन्य संयंत्रों की स्थापना को भी प्रोत्साहन प्रदान करेगा ।
- यह यूरिया उत्पादक कंपनियों के एकाधिकार को तोड़ने में भी सहायक होगा।

इस प्रकार, यह अपशिष्ट को राष्ट्रीय संपत्ति में बदलने की दिशा में एक महत्वपूर्ण और रचनात्मक कदम है।

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन-बफर ज़ोन (Solid Waste Management-Buffer Zone)

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (CPCB) ने लैंडफिल अपशिष्ट निपटान के प्रभाव को कम करने / रोकने हेतु लैंडफिल के चारों ओर बफर ज़ोन को बनाए रखने के प्रस्ताव का ड्राफ्ट दिशानिर्देश जारी किया है।

- प्रस्तावित दिशानिर्देश भविष्य के सभी प्रशोधन संयंत्रों (treatment plants) पर लागू होंगे, जबकि विद्यमान संयंत्रों को वृक्षारोपण और गंध मुक्त प्रौद्योगिकी का उपयोग जैसे उपायों को सम्मिलित करना होगा।

VISION IAS

बफर ज़ोन

- बफर जोन ऐसे क्षेत्र को संदर्भित करता है जिसमे कोई निर्माण-कार्य नहीं होता है। ऐसे क्षेत्र को दो क्षेत्रों को (पर्यावरण संरक्षण के लिए) पृथक करने हेतु निर्दिष्ट किया गया है।
- सर्वप्रथम, सरकार द्वारा नगरीय ठोस अपशिष्ट (प्रबंधन और हैंडलिंग नियम), 2000 [Municipal Solid Waste (Management and Handling Rules), 2000] में बफर ज़ोन शब्द निर्दिष्ट किया गया था।
- ठोस अपशिष्ट प्रबंधन (SWM) नियम, 2016 के तहत संशोधित नियमों में बफर ज़ोन से सम्बद्ध दिशानिर्देश जारी करना CPCB का कर्तव्य बना दिया गया है।
- SWM नियम, 2016 के अनुसार, "प्रति दिन पांच टन की स्थापित क्षमता में वृद्धि कर ठोस अपशिष्ट प्रसंस्करण और निस्तारण केंद्र के चारों ओर निर्माण/विकास रहित बफर ज़ोन को बनाए रखा जाएगा।"

पक्ष

- प्रस्तावित बफर जोन एक अवरोध के रूप में कार्य करेगा तथा भंडारण एवं परिवहन के दौरान कचरे के दोषपूर्ण प्रबंधन के विरुद्ध सहायता प्रदान करेगा।
- यह ठोस अपशिष्ट भरावक्षेत्रों के नकारात्मक प्रभावों से आसपास के पर्यावरण की रक्षा करने में सहायता करेगा।
- यह जिम्मेदार/जवाबदेह भूमि प्रबंधन और संरक्षण प्रथाओं को बढ़ावा देगा।

विपक्ष

- CPCB ने अपने ड्राफ्ट दिशानिर्देशों में अपशिष्ट से ऊर्जा निर्माण करने वाले विद्युत संयंत्रों को आवासीय क्षेत्रों के 20-100 मीटर के भीतर स्थापित करने की अनुमति दी है।
- यह दूरी स्वच्छ भारत मिशन के ठोस अपशिष्ट प्रबंधन मैनुअल में निर्दिष्ट 300-500 मीटर से अत्यंत कम है।
- पहले के विपरीत, ड्राफ्ट दिशानिर्देश अपशिष्ट निस्तारण के तरीकों में से एक "जलाए जाने" का उल्लेख करते हैं।

महत्व

- प्रस्तावित बफर जोन एक अवरोधक के रूप में कार्य करेंगे और भंडारण व परिवहन के दौरान अपशिष्ट के दोषपूर्ण प्रबंधन को रोकने में सहायक होंगे।
- इससे लैंडफिल के नकारात्मक प्रभावों से आसपास के पर्यावरण का बचाव करने में सहायता मिलेगी।
- इससे उत्तरदायित्वपूर्ण भूमि प्रबंधन तथा संरक्षण प्रथाओं को बढ़ावा मिलेगा।

निर्माण एवं विध्वंस अपशिष्ट के प्रबंधन हेतु नए नियम

पृष्ठभूमि

पर्यावरण मंत्रालय द्वारा अधिसूचित निर्माण और विध्वंस अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2016 (The Construction and Demolition Waste Management Rules, 2016) का **उद्देश्य इस प्रकार के** अपशिष्ट **को रिकवर (एकत्र करना), रिसाइकल (पुनर्चक्रण) और रियूज़ (पुनः उपयोग) करना है।**

आवश्यकता

- निर्माण गतिविधि भारतीय नगरों में उच्च वायु प्रदूषण के मुख्य कारणों में से एक है।
- निर्माण और विध्वंस से भारत में प्रतिवर्ष 530 मिलियन टन कचरा उत्पन्न होता है।
- वर्तमान में इसका प्रबंधन शहरी ठोस अपशिष्ट प्रबंधन नियमों के तहत किया जाता है जो इस कार्य के लिए अपर्याप्त हैं। अतः अपशिष्ट प्रबंधन उचित ढंग से नहीं हो पाता है।

प्रमुख बिंदु

- **स्थानीय प्राधिकरणों की ज़िम्मेदारी**
  - स्थानीय प्राधिकरणों के समक्ष एक प्रभावी अपशिष्ट प्रबंधन योजना प्रस्तुत किये जाने के बाद ही निर्माण और विध्वंस की अनुमति दी जाए।
  - अवैध तरीके से अपशिष्ट का निपटान करने वाले लोगों पर नियंत्रण रखना।

- **बड़े स्तर पर अपशिष्ट उत्पन्न करने वाले लोगों की जिम्मेदारी:** उन्हें संग्रहण, परिवहन, प्रसंस्करण और निपटान के लिए संबंधित प्राधिकरण द्वारा तय किया गया शुल्क देना होगा।
- **पुनः उपयोग पर बल**
    - स्थानीय प्राधिकरणों के लिए यह अनिवार्य किया गया है कि निर्माण और विध्वंस से उत्पन्न अपशिष्ट के 10-20% हिस्से का इस्तेमाल नगरपालिका तथा सरकारी कॉन्ट्रैक्ट के माध्यम से ड्रेन कवर्स आदि के निर्माण में किया जाए।

चुनौतियाँ

- **नियमों का समुचित क्रियान्वयन मुख्य चुनौती** है।
- नियमों को लागू करने से पहले ठेकेदारों और अधिकारियों के लिए उचित प्रशिक्षण आवश्यक है।
- स्थानीय प्राधिकारियों को आवश्यक संसाधन, वित्तीय और मानवीय शक्ति उपलब्ध कराये जाने की आवश्यकता है।
- इसके लिए क्षमता-निर्माण तथा पुनर्चक्रण के बुनियादी ढांचे को भी बेहतर बनाने की आवश्यकता है।

1.4.3. सिटी कम्पोस्ट पॉलिसी

(City Compost Policy)

सुर्ख़ियों में क्यों ?

हाल ही में रसायनों तथा उर्वरकों पर संसद की स्थायी समिति ने सरकार को सिटी कम्पोस्ट संबंधी नीति (2016) की प्रगति की समीक्षा करने का सुझाव दिया।

नीति की मुख्य विशेषताएँ

- इस नीति के अंतर्गत प्रति टन सिटी कम्पोस्ट (शहरी कचरे से बनने वाली खाद) पर बाज़ार विकास सहायता के रूप में 1500 रुपये प्रदान किए जाने का प्रावधान किया गया है। इसका उद्देश्य सिटी कम्पोस्ट के उत्पादन और उपयोग में वृद्धि करना है।
- पर्यावरण अनुकूल गुणवत्तायुक्त सिटी कम्पोस्ट सुनिश्चित करने के लिए ईको-मार्क मानक अनिवार्य कर दिए गए हैं।
- उर्वरक कंपनियां रासायनिक उर्वरकों के साथ सिटी कम्पोस्ट का भी विपणन करेंगी।
- सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम (PSUs) और सरकारी विभागों में बागवानी और उससे संबंधित प्रयोजनों हेतु सिटी कम्पोस्ट का उपयोग अनिवार्य बनाया गया है।
- किसानों के मध्य सिटी कम्पोस्ट के लाभों और इसके उपयोग के प्रति जागरूकता बढाने हेतु विभिन्न अभियान प्रारम्भ करना।

समिति की अनुशंसाएँ

- सम्बंधित एजेंसियों के द्वारा अनुभव की जाने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए नीति की प्रगति की नियमित अंतराल पर समीक्षा करना।
- कचरे को अलग करने के लिए (segregation of waste) अनौपचारिक क्षेत्र से अपशिष्ट इकठ्ठा करने वालों तथा कचरा बीनने वालों को शामिल करना।
- केंद्र को राज्यों के साथ इस मुद्दे का संज्ञान लेना होगा ताकि निष्क्रिय सिटी कम्पोस्ट संयंत्रों का संचालन पुनः आरम्भ किया जा सके।
- इसके अतिरिक्त इस समिति ने सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ़ प्लास्टिक्स इंजीनियरिंग एंड टेक्नोलॉजी (CIPET) की भागीदारी हेतु अनुशंसा की ताकि सिटी कम्पोस्ट के उचित विपणन और किसानों के बीच जागरूकता उत्पन्न करने के लिए मल्टीमीडिया अभियान चलाए जा सकें।

1.5. विविध: प्रदूषण

(Miscellaneous: Pollution)

1.5.1. गैर-प्रदूषणकारी औद्योगिक परियोजनाओं की मंजूरी के लिए नियमों को सरल बनाना

(Easing of Rules for Clearance of Non-Polluting Industrial Projects)

पृष्ठभूमि

- MoEF&CC ने **केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड** के साथ परामर्श कर "ईज ऑफ़ डूइंग रेस्पोंसिबल बिज़नस" को बढ़ावा देने के उद्देश्य से उद्योगों को **"रेड"**, **"ऑरेंज"**, **"ग्रीन"** और **"व्हाइट"** में पुन: वर्गीकृत किया।

VISION IAS

- परियोजनाओं हेतु पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के तहत पर्यावरण संबंधी मंजूरी या वायु (प्रदूषण की रोकथाम और नियंत्रण) अधिनियम, 1981 और जल (प्रदूषण निवारण और नियंत्रण) अधिनियम, 1974 के तहत स्वीकृति प्राप्त करने की अपेक्षा की जाती है।

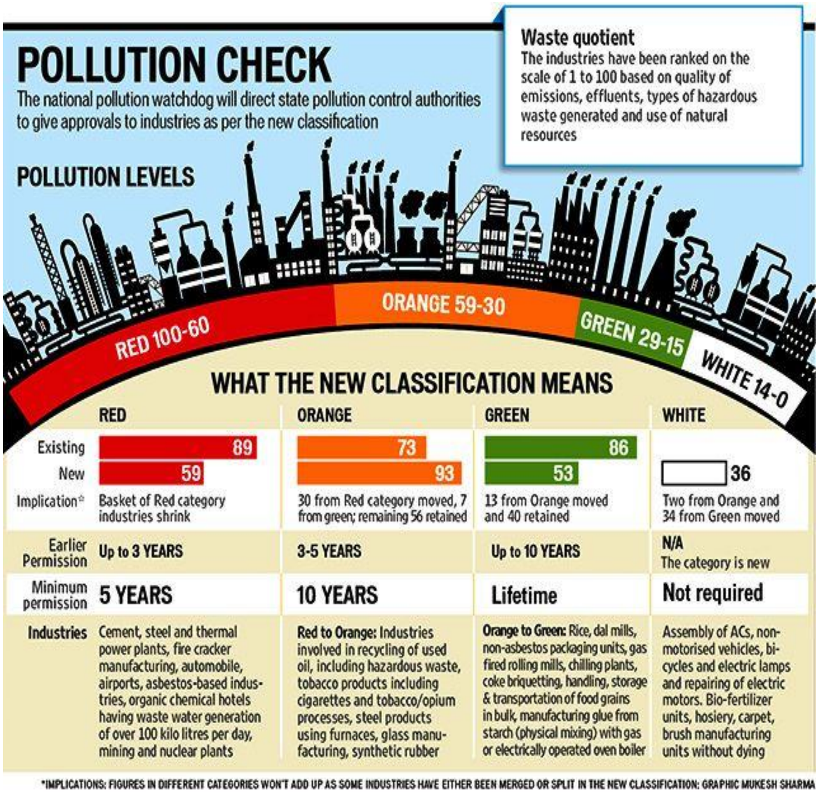

महत्व

- इससे "व्हाइट" कैटगरी के तहत आने वाले उद्योगों हेतु प्रक्रियायें आसान हो जाएगी। इस कैटगरी में रियल एस्टेट परियोजनाएं सम्मिलित हैं।
- इससे संशोधित 'ईज ऑफ़ डूइंग बिज़नस' के माध्यम से विकास को बढ़ावा देने हेतु प्रक्रियात्मक विलंब में कमी होगी।

आलोचना

- रियल एस्टेट परियोजनाओं हेतु पर्यावरण संबंधी मंजूरी लेने की आवश्यकता को समाप्त करना जल्दीबाजी होगी, जबकि 9 दिसंबर को जारी अधिसूचना से सम्बंधित इसी तरह का मामला NGT में लंबित है।
- यह पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम और साथ ही EIA अधिसूचना, 2006 को भी नजरअंदाज करता है।

1.5.2.व्यापक पर्यावरणीय प्रदूषण सूचकांक (CEPI)

(Comprehensive Environmental Pollution Index (CEPI))

पृष्ठभूमि: औद्योगिक संकुल, औद्योगिक प्रदूषण का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। किसी भी प्रकार का प्रदूषण जिसका तात्कालिक स्रोत औद्योगिक गतिविधियाँ होती हैं उसे **औद्योगिक प्रदूषण** कहा जाता है। औद्योगिक प्रदूषण विभिन्न रूपों में पाया जाता है। इसके कारण वैश्विक स्तर पर अनेक समस्याएं उत्पन्न हुई हैं, जैसे- पेयजल स्रोतों का संदूषित होना, वायु में अवांछनीय विषाक्त पदार्थो के स्तर में वृद्धि और मिट्टी की गुणवत्ता में कमी।

व्यापक पर्यावरणीय प्रदूषण सूचकांक (CEPI): व्यापक पर्यावरणीय प्रदूषण सूचकांक (CEPI) की अवधारणा को केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड (CPCB) द्वारा 2009-10 के दौरान विकसित किया गया था। इसका उद्देश्य प्रमुख औद्योगिक संकुलों का व्यापक पर्यावरणीय मूल्यांकन करना तथा चिह्नित किए गए गम्भीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों के लिए उपचारात्मक *कार्य योजना* का निर्माण करना है।

कार्यपद्धति: 2016 में CEPI को संशोधित किया गया था। वर्तमान में इस सूचकांक की गणना विभिन्न कारकों के आधार पर की जाती है, जैसे- औद्योगिक गतिविधियों का स्तर, आस-पास के पर्यावरण (वायु, सतही जल और भूजल) की गुणवत्ता, स्वास्थ्य संबंधी आंकड़े (प्रमुख अस्पतालों के अध्ययन से प्राप्त आंकड़े) और उद्योगों की अनुपालन संबंधी स्थिति।
नए मानक केवल वायु और पेयजल की गुणवत्ता की सख़्त निगरानी पर आधारित हैं।

महत्त्व:

- CEPI का उद्देश्य पर्यावरणीय उद्देश्यों के अनुरूप औद्योगिक विकास को बढ़ावा देना है। नई अवधारणा औद्योगिक क्षेत्र को स्वच्छ प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेगी, इसके परिणामस्वरुप प्रदूषण में कमी आएगी।

VISION

- राज्यों को भी गम्भीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों से संबंधित *CEPI स्कोर* को सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने और *कार्य योजना* (अल्पावधि, मध्यम अवधि और दीर्घावधि) को कार्यान्वित करने के लिए कहा गया है। यह उन औद्योगिक संकुलों की पर्यावरणीय गुणवत्ता को पुनःस्थापित करेगा और *CEPI स्कोर* को नीचे लाने में मदद करेगा। केन्द्रीय बोर्ड ने कहा है कि कार्यान्वयन की प्रगति पर नजर रखने के लिए उसकी समय-समय पर समीक्षा की जानी चाहिए।
- राज्य सरकारों को सार्वजनिक परामर्श जारी करने की आवश्यकता है जिसमें यह घोषणा निहित हो कि ऐसे गंभीर रूप से प्रदूषित औद्योगिक संकुलों का आशय केवल औद्योगिक गतिविधियों से है।

भारत में औद्योगिक संकुलों की वर्तमान स्थिति: CEPI - 2009 के अनुसार, भारत में 88 संकुलों में से 43 संकुलों को गम्भीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों (CPAs) के रूप में घोषित किया गया है जिनका स्कोर 70 या अधिक है, जबकि 32 को अत्यधिक गम्भीर प्रदूषित क्षेत्रों (SPAs) के रूप में घोषित किया गया है।

प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड ने 2009 के पश्चात् 43 गम्भीर रूप से प्रदूषित क्षेत्रों हेतु निगरानी गतिविधियाँ आरम्भ की हैं।

आलोचना:

- पूर्ववर्ती CEPI औद्योगिक संकुलों के वायु, जल, भूमि, स्वास्थ्य और पारिस्थितिकी पर पड़ने वाले प्रभाव पर आधारित था। इसने ऐसे क्षेत्रों में प्रदूषण से निपटने के लिए की गई प्रगति के आंकलन के लिए एक मापदंड के रूप में कार्य किया था। नए मानदंडों में CEPI की गणना करते समय, एक संकुल में संभावित प्रभावित जनसंख्या और स्वास्थ्य पर प्रभाव के आंकलन को समाप्त कर दिया गया है।
- विशेषज्ञों का मानना है कि "संकुल में संभावित प्रभावित जनसंख्या" के मानदंडों को समाप्त करना तथा इन्हें प्रमुख अस्पतालों के अध्ययन से प्राप्त आंकड़े से प्रतिस्थापित करने से सम्पूर्ण स्थिति का पता नहीं चलेगा।
- पर्यावरणविदों का मानना है कि वर्तमान पर्यावरणीय मानदंडों को इस प्रकार बनाया गया है ताकि और अधिक औद्योगिक परियोजनाओं को अनुमति प्रदान की जा सके। उन्होंने चिंता व्यक्त की है कि नए मानदंड औद्योगिक संकुलों में और इसके आस-पास रहने वाले लाखों लोगों को प्रभावित कर सकते हैं।

1.5.3. पॉल्यूटर-पे प्रिन्सिपल

(Polluter-Pay Principle)

सुर्ख़ियों में क्यों?

पिछले वर्ष दिल्ली उच्च न्यायालय ने 'आर्ट ऑफ़ लिविंग' संगठन को यमुना को प्रदूषित करने के लिए आर्थिक दंड चुकाने का आदेश दिया था। आर्थिक दंड के इस आदेश को 'पॉल्यूटर-पे प्रिन्सिपल' के आधार पर वैधता प्राप्त होती है। यह सिद्धांत पर्यावरणीय न्यायशास्त्र के अंतर्गत एक सुस्थापित सिद्धांत है।

इस सिद्धांत का आशय :

- पुनरुद्धार की लागत तथा क्षतिपूर्ति प्रदूषणकर्ता को ही वहन करनी पड़ेगी।
- इससे निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति होती है:
    - सामाजिक न्याय: यह सिद्धांत एक उपचारात्मक पद्धति का समर्थन करता है ताकि करदाता का धन किसी दूसरे की गलती की भरपाई में व्यय न हो।
    - निवारक प्रभाव: यह संसाधनों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देता है। इस प्रकार यह संधारणीय विकास को प्रोत्साहित करने में सहायक है। साथ ही यह प्रदूषक के प्रति एक नकारात्मक फीडबैक तन्त्र के रूप में भी कार्य करता है।
    - यह एक ऐसा व्यवहारिक समाधान प्रस्तुत करता है जिसे कार्यान्वित किया जा सकता है।

भारत में विकास:

- यह अन्तराष्ट्रीय कानून का एक प्रचलित सिद्धांत है।
- रियो घोषणापत्र के सिद्धांत 16 के अंतर्गत इसका स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है।

VISION IAS

- सर्वोच्च न्यायालय ने इसे सर्वप्रथम वेल्लोर नागरिक वाद (1996) में मान्यता प्रदान की। न्यायालय ने इसे संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत अनुच्छेद 47, 48A और 51A (g) से जोड़कर देखा।
- इसे प्रतिपूरक वनीकरण निधि अधिनियम (कॉम्पेनसेटरी एफॉरेस्टेशन फण्ड एक्ट) 2016 तथा परमाणु क्षति के लिए नागरिक दायित्व अधिनियम (न्यूक्लियर सिविल लायबिलिटी एक्ट) जैसे कानूनों में भी स्थान दिया गया है।

मुद्दे:

- प्रदूषणकर्ता की पहचान करना कठिन है क्योंकि प्रदूषण कई चरणों से होकर गुजरता है।
- आम व्यक्ति वित्तीय रूप से अक्षम, अनभिज्ञ अथवा कानूनी प्रक्रिया में उलझने के प्रति अनिच्छुक हो सकते हैं। इसके कारण संभव है कि कई मामलों में बिना पर्याप्त विचार हुए ही निर्णय ले लिए जाएँ।
- क्षति की प्रकृति अनिश्चित होती है तथा इसका आंकलन करना कठिन है।
- यह भी सम्भव है कि प्रदूषणकर्ता की लागत वहन करने की क्षमता क्षतिग्रस्त स्थिति के पुनरुद्धार के लिए पर्याप्त न हो।
- इसमें नैतिक मुद्दे शामिल हैं। इसके अंतर्गत एक तरह से प्रदूषणकर्ता को आर्थिक दंड के भुगतान के पश्चात प्रदूषण फैलाने की अनुमति मिल जाती है। इसमें कोई अन्य उत्तरदायित्व तय नहीं किया गया है अतः यह बड़ी व समृद्ध कम्पनियों के लिए पर्याप्त रूप से निवारक सिद्ध नहीं हो पाता है। छोटी कम्पनियों को इस प्रक्रिया में हानि उठानी पड़ सकती है।

2. संरक्षण उपाय

(CONSERVATION MEASURES)

2.1. वन संरक्षण

(Forest Conservation)

2.1.1. कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने में सामुदायिक वनों का महत्व

(Significance Of Community Forests In Controlling Carbon Emissions)

FAO द्वारा दी गयी परिभाषा के अनुसार,"सामुदायिक वानिकी से आशय उस स्थिति से है जिसमें वन सम्बन्धी क्रियाकलापों में स्थानीय समुदाय की गहरी भागीदारी होती है। इसके अंतर्गत वन में निवास करने वाले समुदायों के लिए लकड़ियों तथा अन्य वनोपजों की कमी वाले क्षेत्रों में स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति हेतु वनों का एक निश्चित क्षेत्र निर्धारित किया जाना, नकदी फसलों हेतु फार्म बनाकर वृक्ष उगाना, घरेलू, शिल्पकारी या छोटे उद्योग के माध्यम से आय प्राप्त करना जैसे कार्य सम्मिलित हैं।

महत्त्व: पारंपरिक रूप से ये वन निम्नलिखित भूमिका का निर्वाह करते हैं:

- ये ग्रामीण समुदायों की घरेलू बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक ईंधन और अन्य वस्तुएं प्रदान करते हैं।
- खाद्य उत्पादन को बनाये रखते है साथ ही पर्यावरणीय स्थिरता भी प्रदान करते हैं।
- ग्रामीण समुदायों में आय और रोजगार का सृजन सुनिश्चित करते हैं। साथ ही आजीविका के साधनों का विविधिकरण करते हैं

वर्तमान समय में उष्णकटिबंधीय वनों की अंधाधुंध कटाई के कारण सामुदायिक वनों के महत्त्व में वृद्धि हुयी है। आज ऊष्णकटिबंधीय जंगलों में भूपृष्ठ के ऊपर उपस्थित कुल कार्बन का दसवां हिस्सा ऐसे वनों में संचित है जिनकी देखरेख सामुदायिक रूप से की जाती है। परन्तु इन्हें औपचारिक तथा विधिक पहचान नहीं प्रदान की गयी हैं।

- बिना समुचित अधिकारों के इन वनों के समक्ष विभिन्न शक्तिशाली समूहों द्वारा अवैध, बलपूर्वक या अन्यायपूर्ण दोहन तथा इन्हें जब्त किए जाने का खतरा उपस्थित होता है। ये शक्तिशाली समूह इन समुदायों को पलायन के लिए विवश कर देते हैं, वनों का नाश कर देते हैं तथा इन वनों में संचित कार्बन के वातावरण में मुक्त हो जाने का कारण बन जाते हैं।

सामुदायिक प्रबंधन के लाभ

- देशज और स्थानीय समुदायों के लोग इन वनों के सबसे अच्छे प्रबंधक हैं।
- इसके अलावा, स्वदेशी लोगों के स्वयं के लिए और अपने वनों के प्रबंधन के लिए अधिकारों को सुरक्षित करना, उत्सर्जन को सीमित करने के लिए एक सस्ता तरीका है जबकि इससे समुदायों की 'आर्थिक स्थिरता' में भी सुधार होगा।
- हाल के एक अध्ययन में कहा गया है कि उष्णकटिबंधीय वनों द्वारा प्रदान की जाने वाली पारिस्थितिकी तंत्र सेवाएँ जैसे मृदा प्रतिधारण, परागण, जैव विविधता, बाढ़ नियंत्रण, स्वच्छ पानी के स्रोत के साथ पर्यटन और विभिन्न क्षेत्रों के लिए अन्य आर्थिक लाभ अरबों डॉलर के मूल्य के बराबर हैं। इसके विपरीत, इस भूमि अधिकार को हासिल करने की लागत कुल लाभ के 1% से भी कम है।

चुनौतियां

- कई उष्णकटिबंधीय वन वाले राष्ट्रों ने वन हानि से आगे उत्सर्जन को रोकने के लिए इस लागत प्रभावी समाधान को सम्मिलित नहीं किया है।
- इस वर्ष के शुरू में जारी राइट एंड रिसोर्स इनिशिएटिव (RRA) की रिपोर्ट के अनुसार, पेरिस समझौते के तहत कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए 188 में से केवल 21 देशों ने अपनी राष्ट्रीय योजनाओं में वन समुदाय के लोगों को शामिल किया है।

- अध्ययनों से पता चला है कि देशज लोग और स्थानीय समुदाय, विश्व की भूमि के कम से कम 50% भाग पर दावा करते हैं जिसमें वन भी शामिल हैं। लेकिन कानूनी तौर पर वैश्विक भूमि के सिर्फ 10% का ही स्वामित्व उनके पास है और इस भूमि के अतिरिक्त 8% भूमि पर मान्यता प्राप्त प्रबंधन के अधिकार भी सीमित हैं।
- कानूनी सुरक्षा की कमी वनों को अधिक शोषण के लिए सुभेद्य बनाती है। उदाहरण के लिए, अरुणाचल प्रदेश के वन क्षेत्र का लगभग 60 प्रतिशत "अवर्गीकृत राज्य वन ("unclassed state forest:USF") के रूप में वर्गीकृत किया गया है और ये वन काफी हद तक स्थानीय समुदायों के नियंत्रण में हैं। वन स्थिति रिपोर्ट (द स्टेट ऑफ़ फारेस्ट रिपोर्ट: SFR, 2011) के अनुसार राज्य में सामुदायिक स्वामित्व वाले वन क्षेत्र में 74 वर्ग किलोमीटर की गिरावट दर्ज की गई है।

आगे की राह

- इस प्रकार, वैश्विक समुदाय को मान्यता देने की आवश्यकता है जो कि उष्णकटिबंधीय वनों को अक्षुण्ण रखकर कार्बन उत्सर्जन को रोकेगा।
- वन का सामुदायिक प्रबंधन, जो एक वास्तविकता है, को न केवल पर्यावरणीय लाभ के लिए अवश्य बढ़ावा दिया जाना चाहिए बल्कि इसके विभिन्न आर्थिक और सामाजिक लाभों को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।
- वनों के प्रबंधन तथा विकास हेतु निर्मित संयुक्त वन प्रबंधन (JFM-Joint Forest Management) कार्यक्रम के प्रभावों की निगरानी हेतु संयुक्त वन प्रबंधन इकाई का निर्माण किया गया है। यह ऊष्णकटिबंधीय देशों में स्थानीय समुदायों को महत्त्वपूर्ण भूमिका प्रदान करने का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

2.1.2. पश्चिमी घाट का संरक्षण

(Western Ghats Conservation)

पृष्ठभूमि

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (MoEF) द्वारा पश्चिमी घाट में पारिस्थितिकी-संवेदनशील क्षेत्र (ESA) के संबंध में एक ड्राफ्ट अधिसूचना जारी की गयी है l इस अधिसूचना में केंद्र और राज्यों के बीच चल रही वार्ताओं के कारण एक वर्ष से अधिक की देरी हुई है। हाल ही में केंद्र ने एक नोटिस जारी किया जिसके द्वारा पश्चिमी घाट के 60,000 वर्ग किलोमीटर या 37 प्रतिशत क्षेत्र को ESA घोषित किया गया है। हालांकि, राज्यों द्वारा इसका विरोध किया गया क्योंकि ESAs विकास गतिविधि को सीमित करते हैं। इसके बाद केंद्र सरकार ने प्रत्येक राज्य सरकार की सिफारिशों को स्वीकृत करने का निर्णय लिया है।

पूर्व में गठित समितियां

गाडगिल समिति:

सरकार ने 2011 में पारिस्थितिकीविद् माधव गाडगिल के नेतृत्व में एक विशेषज्ञ समिति का गठन किया था। इस समिति ने सिफारिश की थी कि संपूर्ण पश्चिमी घाट को ESA के रूप में घोषित किया जाए और केवल वर्गीकृत क्षेत्रों में ही सीमित विकासात्मक कार्यों की अनुमति हो।

माधव गाडगिल समिति की अनुशंसाएं

- इस समिति ने पश्चिमी घाट की समृद्ध जैव विविधता और इसके द्वारा प्रदान की जा रही सिंचाई और पेयजल जैसी पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं के कारण सम्पूर्ण पश्चिमी घाट को एक पारिस्थितिकी संवेदनशील क्षेत्र (Ecologically Sensitive Area:ESA) घोषित करने की अनुशंसा की थी।
- इसने पश्चिमी घाट के ESA को तीन ज़ोन में विभक्त करने का सुझाव दिया:
    - सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र, ESZ I (Ecologically Sensitive Zone I) के रूप में
    - सामान्य रूप से महत्वपूर्ण क्षेत्र, ESZ II (Ecologically Sensitive Zone II) के रूप में
    - सबसे कम महत्वपूर्ण क्षेत्र, ESZ III (Ecologically Sensitive Zone III) के रूप में

    आधारभूत अवसंरचना के संबंध में ESZ III को अत्यधिक लचीला बनाया गया था। इसके माध्यम से गाडगिल समिति ने पश्चिमी घाट के लगभग 64 प्रतिशत भाग को संरक्षित करने की अनुशंसा की थी।
- स्थानीय संस्थाओं को प्रत्येक ESZ में गतिविधियों को विनियमित करने और प्रोत्साहित करने का अधिकार होना चाहिए।
- ESZs की पहचान करने के लिए उपयोग किए जाने वाले पैरामीटर -
    - जैविक कारकों जैसे प्रजातियों की समृद्धि और दुर्लभता, पारिस्थितिक तन्यकता (रिज़िलीअन्स) आदि।
    - उस क्षेत्र का सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व।
    - ढलान, स्वरुप, ऊंचाई, वर्षा आदि भू-जलवायुवीय विशेषताएं।
    - जोखिम के प्रति सुभेद्यता।
    - हितधारकों का मूल्यांकन।
    - नदियों का उद्गम, राष्ट्रीय उद्यानों और अभ्यारण्य आदि के निकट आवास इत्यादि।
- ESZs में प्रतिबंधित गतिविधियां GM फसलें, SEZ, भूमि उपयोग में बदलाव, थर्मल प्लांट, रेत खनन आदि होंगी।

कस्तूरीरंगन समिति

- 2012 में, के.कस्तूरीरंगन समिति ने अनुशंसा की थी कि केवल लगभग 60,000 वर्ग किमी (पश्चिमी घाटों का लगभग 37%) को ESZ के रूप में घोषित किया जाएगा। गाडगिल समिति की अनुशंसा की तुलना में इस समिति ने ESA के क्षेत्रों मे उल्लेखनीय कमी की।

पारिस्थितिकी संवेदनशील क्षेत्र (ESA) क्या है?

- एक पारिस्थितिकी-संवेदनशील क्षेत्र वह है जिसे स्थानिक प्रजातियों, पौधों और पशुओं की बहुत अधिक संख्या के कारण सरकार द्वारा संरक्षित किया जाता है। **पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986** के अनुसार, सरकार पारिस्थितिकी संवेदनशील क्षेत्रों में खनन, रेत उत्खनन और ताप विद्युत संयंत्रों जैसे औद्योगिक कार्यों पर प्रतिबंध लगा सकती है। **MoEF&CC की परिभाषा के अनुसार** यह जैव-जलवायु इकाई है, जिसमें मानवीय क्रियाओं ने जैविक समुदायों और उनके प्राकृतिक आवास के ढांचे में स्थाई परिवर्तन कर दिया हैं।

समिति की रिपोर्ट का विरोध क्यों·

- राज्यों ने रिपोर्ट की सिफारिशों पर आपत्ति जताई हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि यदि सिफारिशों को लागू किया जाता है, तो यह विकास गतिविधियों को बाधित करेगा और लाखों लोगों के जीवन को प्रभावित करेगा। ESA की घोषणा बालू खनन, उत्खनन, स्कूलों, अस्पतालों और सामूहिक आवास निर्माण जैसे विकासात्मक गतिविधियों पर प्रतिबंध को बढ़ावा देगी।
- इस मुद्दे को विकास-बनाम-संरक्षण के रूप में पेश किया जा रहा है जो विरोध को बढ़ावा देता है।

आगे की राह

पहले से ही मौजूद राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों के अतिरिक्त पश्चिमी घाट का कितना क्षेत्र पारिस्थितिकी-संवेदनशील क्षेत्र के रूप मे सीमांकित किया जा सकता है, इस प्रश्न का शीघ्र समाधान करने की आवश्यकता है। जिससे ESA से इतर अन्य क्षेत्रों में ऐसी

VISION IAS

औद्योगिक गतिविधियां, खनन और वनों की कटाई की जा सके जिसके पर्यावरणीय दुष्प्रभाव न हों। इसके लिए एक फ्रेमवर्क की आवश्यकता है जिसके तहत वैज्ञानिक साक्ष्यों और सार्वजनिक चिंताओं पर लोकतांत्रिक ढंग से चर्चा की जा सके और ESAs के लिए सहमति बन सके।

पश्चिमी घाट का महत्त्व

- पश्चिम घाट गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, गोवा, केरल और तमिलनाडु में फैले पश्चिम तट के सहारे 1500 किमी विस्तृत पारिस्थितिक रूप से संपन्न पट्टी हैं
- यह भारत के दो जैव विविधता हॉटस्पॉट्स में से एक है। इसके अलावा दूसरा हॉटस्पॉट पूर्वी हिमालय है। पश्चिमी घाट को विश्व के सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक विरासत स्थलों में से एक माना जाता है।
- यह भारत के सबसे महत्वपूर्ण जैव-भौगोलिक क्षेत्रों में से एक है, क्योंकि यह स्थानिक प्रजातियों के मामले में अत्यंत समृद्ध है। यहाँ पर उभयचर और सरीसृप प्रजातियों में स्थानिकता का स्तर उच्च है।
- विविध स्थलाकृति और सूक्ष्म जलवायवीय दशाओं के कारण, पश्चिमी घाट के भीतर कुछ क्षेत्रों को विशिष्ट प्रजातियों की उत्पत्ति के लिए अत्यधिक सक्रिय माना जाता है।
- पश्चिमी घाट सम्पूर्ण देश में मानसून लाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- अपनी जैव विविधता के विनाश के कारण पश्चिमी घाटों के बीच बहने वाली नदियों के अपवाह परिवर्तन से प्रायद्वीपीय भारत में **नदी जल विवादों में वृद्धि हो सकती है।**

पश्चिमी घाट के समक्ष उपस्थित खतरे

वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फंड और **इंटरनेशनल यूनियन फॉर कन्जर्वेशन ऑफ नेचर (IUCN)** द्वारा तैयार की गई '**प्रोटेक्टिंग पीपल थ्रू नेचर**' रिपोर्ट के अनुसार, पश्चिमी घाट को निम्नलिखित खतरों का सामना करना पड़ रहा है:

- हानिकारक औद्योगिक गतिविधियों जैसे खनन आदि के कारण पारिस्थितिकीय विनाश। इसमें पेट्रोलियम और गैस का अन्वेषण और निष्कर्षण, खनन, वृक्षों की अवैध कटाई और बड़े पैमाने पर विनिर्माण कार्य शामिल हैं।
- अविवेकशील औद्योगिक विकास इन 'पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं और उन पर निर्भर समुदायों के लिए एक खतरा बन गया है। इन्हें **एक्सट्रैक्टिव थ्रेट्स** के रूप में जाना जाता है।

हाल ही में जैव विविधता की हानि तथा पर्यावासों में कमी के कारण पश्चिमी घाट का विस्तार कम हो गया है: यह वर्षा प्रतिरूप, नदी प्रवाह, जल आपूर्ति और देश की जलवायु को प्रभावित कर सकता है। इसलिए इसका संरक्षण आवश्यक है।

2.2. भारत में आर्द्रभूमि (वेटलैंड्स) प्रबंधन

(Wetland Management In India)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- 1971 में ईरान के शहर, रामसर में आर्द्रभूमियों के संरक्षण के लिए एक संधि पर हस्ताक्षर किए जाने के उपलक्ष्य में 2 फरवरी को विश्व आर्द्रभूमि दिवस मनाया जाता है। इस वर्ष **भोज आर्द्रभूमि** पर विश्व आर्द्रभूमि दिवस मनाया गया।
- 2017 के विश्व आर्द्रभूमि दिवस का थीम *'वेटलेंड फॉर डिजास्टर रिस्क रिडक्शन'* था।

आर्द्रभूमि क्या है?

आर्द्रभूमि वे क्षेत्र हैं जहां जल प्राथमिक कारक है और यह क्षेत्र पर्यावरण और उससे जुड़ी विभिन्न प्रजातियों को नियंत्रित करता है। दूसरे शब्दों में, "स्थलीय और जलीय पारिस्थितिकी प्रणालियों के बीच संक्रमणकालीन भूमि जहां जलस्तर आमतौर पर सतह पर या सतह के निकट होता है और भूमि उथले जल से आवृत रहती है"।

VISION IAS

रामसर सम्मलेन

- यह आर्द्रभूमियों के संरक्षण और सतत उपयोग हेतु अंतरराष्ट्रीय संधि है।
- इसका नाम ईरान के रामसर शहर के नाम पर रखा गया, जहां 1971 में आयोजित सम्मलेन में इस संधि पर हस्ताक्षर किए गए थे।
- भारत में अंतर्राष्ट्रीय महत्व की आद्रभूमियों के रूप में 26 रामसर स्थल नामित किये गए हैं।
- उनमें से कुछ महत्वपूर्ण आर्द्रभूमियाँ चिल्का झील (ओडिशा), प्वाइंट केलिमर वन्यजीव और पक्षी अभयारण्य (तमिलनाडु), सांभर झील (राजस्थान) और ऊपरी गंगा नदी (उत्तर प्रदेश) हैं।

राष्ट्रीय आर्द्रभूमि संरक्षण कार्यक्रम (NWCP)

- 1985-86 में प्रारंभ इस कार्यक्रम के अंतर्गत पर्यावरण, वन तथा जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के द्वारा अभी तक लगभग 115 ऐसी आद्रभूमियों की पहचान कर ली गयी है जिन्हें तत्काल संरक्षण एवं प्रबंधन पहलों की आवश्यकता है।
- योजना का उद्देश्य: देश में उपस्थित आद्रभूमियों का संरक्षण तथा बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग सुनिश्चित करना जिससे कि उनका और अधिक क्षरण न हो सके।

योजना के उद्देश्य:

- देश में आर्द्रभूमियों के संरक्षण और प्रबंधन के लिए नीतिगत दिशानिर्देश तैयार करना;
- प्राथमिकता वाली आर्द्रभूमियों में गहन संरक्षण उपाय लागू करना;
- कार्यक्रम के कार्यान्वयन की निगरानी करना;
- भारतीय आर्द्रभूमियों की एक सूची तैयार करना।

आर्द्रभूमियों का महत्त्व

- आर्द्रभूमियां अत्यधिक उत्पादक होती हैं। ये असाधारण रूप से वृहद् जैव विविधता का पोषण करती हैं।
- ये अपशिष्ट स्वांगीकरण (ऐसीमिलेशन), जल शोधन, बाढ़-शमन, अपरदन नियंत्रण, भूजल पुनर्भरण, सूक्ष्म जलवायु विनियमन इत्यादि सेवाएँ प्रदान करती हैं।
- ये सांस्कृतिक विरासत का हिस्सा होने के साथ ही कई महत्वपूर्ण मनोरंजक, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों का अनुसमर्थन करती हैं।
- ये मछली पकड़ने तथा चावल की खेती के साथ-साथ यात्रा, पर्यटन और जल आपूर्तिकारक के रूप में आजीविका के स्रोत का कार्य करती हैं।
- आर्द्रभूमियाँ विभिन्न जीवों के आश्रयस्थल के रूप में कार्य करती हैं, हमारी तटरेखाओं की सुरक्षा करती हैं, नदियों की बाढ़ों के लिए एक प्राकृतिक स्पंज के रूप में कार्य करती हैं तथा जलवायु परिवर्तन को विनियमित करने के लिए कार्बन डाई-ऑक्साइड को संचित करती हैं।

वर्तमान प्रबंधन फ्रेमवर्क

- आद्रभूमियों का प्रबंधन राष्ट्रीय जलीय प्रणाली संरक्षण योजना (National Plan for Conservation of Aquatic Eco-systems: NPCA) के अंतर्गत किया जाता है।
- इस योजना के तहत आर्द्रभूमि संरक्षण की दिशा में एक केंद्रीय नीति सुनिश्चित करना, कार्यक्रमों की निगरानी तथा आद्रभूमियों की एक सूची तैयार किया जाना शामिल है।
- यद्यपि आद्रभूमियों का संरक्षण एवं प्रबंधन राज्य सरकारों का उत्तरदायित्व है, तथापि उनकी योजनाओं का अनुमोदन केंद्र सरकार द्वारा किया जाता है।

समस्याएँ

- आद्रभूमियों का समुचित वर्गीकरण तथा उनकी पहचान न होने के कारण एक बार नष्ट हो जाने के बाद न तो उनका पुनर्निर्माण किया जा सकता है न ही संरक्षण।
- केंद्र सरकार के समन्वय से अपने अधिकार क्षेत्रों में स्थित आर्द्रभूमियों की पहचान करने के **आर्द्रभूमि (संरक्षण तथा प्रबंधन) नियम, 2010** में निहित अपने वैधानिक कर्तव्य को निभाने में राज्य असमर्थ रहे हैं।
- केंद्र सरकार ने **पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986** के कुछ प्रावधानों का उल्लंघन किया है, जिससे आद्रभूमियों के लुप्त होने का खतरा बढ़ गया है।
- 2007 और 2011 में इसरो द्वारा किये गए अन्वेषण में यह स्पष्ट हुआ है कि सरकार आद्रभूमियों में तथा उनके आसपास गतिविधियों को रोकने में असमर्थ रही है।

नए नियम

- दिसंबर 2016 में **आद्रभूमि (संरक्षण और प्रबंधन) संशोधन नियम, 2016** को अधिसूचित किया गया था।
- पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने 2010 में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत आर्द्रभूमियों के संरक्षण और प्रबंधन के लिए नियमों को अधिसूचित किया था। नये नियम उनका स्थान लेंगे।

पुराने नियमों में बड़ा बदलाव

- केंद्रीय आर्द्रभूमि नियामक प्राधिकरण (CWRA) को समाप्त कर दिया जाएगा। अधिसूचना जारी करने की शक्ति संबंधित राज्यों के मुख्यमंत्रियों के अधीन रहेगी।
- 2010 के नियम में निर्धारित की गई 12 महीने की अवधि के सापेक्ष नए नियम में अधिसूचना के लिए कोई समयसीमा निर्धारित नहीं की गई है।
- प्रतिबंधित गतिविधियों की संख्या को कम किया गया है।
- पहले CWRA द्वारा लिए गए निर्णय को एक नागरिक द्वारा NGT में चुनौती दी जा सकती थी। नए नियमों के तहत नागरिक जांच का कोई प्रावधान मौजूद नहीं है।

नए नियमों से सम्बंधित मुद्दे

- नियमों के क्रियान्वयन में राज्यों का रिकॉर्ड सराहनीय नहीं है। यह देखा गया है कि राज्य स्थानीय दबाव को स्वीकार करने में अतिसंवेदनशील होते हैं। हाल ही में NGT ने 2010 के नियमों के तहत झीलों को अधिसूचित भी न करने के लिए कुछ राज्यों को फटकार लगाई थी। इन तथ्यों के प्रकाश में पर्याप्त जाँच के बिना विकेन्द्रीकरण अनुत्पादक हो सकता है।
- यह मसौदा केंद्रीय आर्द्रभूमि नियामक प्राधिकरण को समाप्त करता है। यह आर्द्रभूमियों और उनके संरक्षण हेतु स्वतःसंज्ञान लेता था।
- 2010 के नियमों में उल्लिखित आद्र्भूमियों को पहचानने के पारिस्थितिक मानदंडों यथा जैव विविधता, रीफ, मैंग्रोव, और आर्द्रभूमि परिसरों का नए मसौदा नियम में अभाव है।
- नए मसौदा नियम में आर्द्रभूमियों के संरक्षण और हानिकारक गतिविधियों का स्पष्टीकरण वैसे खण्डों को हटा दिया गया है जिसके लिए नियमन की आवश्यकता है। ऐसा लगता है कि जैसे प्रतिबंधित गतिविधियां अचानक काफी कम हो गई हों, जिससे संरक्षण उपायों को कमजोर कर दिया गया है। 'विवेकपूर्ण उपयोग' जैसे अस्पष्ट पद के तहत गतिविधियों की अनुमति दी गई है।
- स्थानीय लोगों और संस्थाओं को कोई भूमिका नहीं दी गई है।

आद्र्भूमि प्रबंधन तंत्र से सम्बंधित अन्य मुद्दे

- वर्तमान में केवल अधिसूचित आद्र्भूमि को ही संरक्षण प्रदान किया जाता है। इस प्रक्रिया में बहुधा छोटी आद्रभूमियों पर ध्यान नहीं दिया जाता।

- अधिसूचित करने की प्रक्रिया राज्य सरकार द्वारा ही आरम्भ की जाती है। अतः इस प्रक्रिया के प्रमुख हितधारकों अर्थात स्थानीय लोगों तथा निकायों को कोई लाभ नहीं होता है। अतः इस प्रक्रिया के प्रमुख हितधारकों अर्थात स्थानीय लोगों तथा निकायों की कोई हिस्सेदारी इसमें नहीं होती है।
- रामसर साइट्स के अलावा आद्रभूमियों पर कोई भी डाटा बैंक उपलब्ध नहीं है। इस कारण आंकड़ों के बिना आर्द्रभूमि की सीमा का पता नहीं चलता और इसका अतिक्रमण आसान हो जाता है।
- वर्तमान में आर्द्रभूमियों से संबंधित नियमों के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार नगर निकायों के पास आर्द्रभूमि की पहचान करने के लिए आवश्यक तकनीकी विशेषज्ञता का अभाव है।

सुझाव

- आर्द्रभूमियों की पहचान के लिए वैज्ञानिक मापदंड की जरूरत है- एक स्वतंत्र प्राधिकरण इस के सन्दर्भ में ज्यादा मदद कर सकता है।
- रामसर के अलावा आर्द्रभूमियों का एक डाटा बैंक बनाने के लिए इस विधि का उपयोग करें।
- उचित नियंत्रण और संतुलन- केंद्र सरकार और नागरिकों दोनों की ओर से आवश्यक है।
- नियम जन-केंद्रित होना चाहिए; आर्द्रभूमियों की पहचान करने में *टाउन एंड कंट्री प्लानिंग बोर्ड* की भागीदारी होनी चाहिए। प्रबंधन में मछुआरा समुदाय, कृषक और चरवाहा समुदायों जैसे स्थानीय लोगों की अधिक भूमिका होनी चाहिए क्योंकि आर्द्रभूमियों के संरक्षण का इन्हें अनुभव होता है और इसमें इनका हित भी समाहित होता है।
- समाज के सभी क्षेत्रों के हितधारकों को शिक्षित करने के लिए **व्यापक जन जागरूकता अभियान** आरम्भ किया जाना चाहिए। इस सन्दर्भ में विशेष रूप से स्थानीय समुदायों को जागरुक बनाने की आवश्यकता है ताकि वे आर्द्रभूमि पारिस्थितिकी तंत्रों का मूल्य समझ सकें।

2.3. वन्यजीव/ जैव-विविधता संरक्षण

(Wildlife/ Biodiversity Conservation)

2.3.1. मानव-वन्यजीव संघर्ष :

(Man-Animal Conflict)

सुर्ख़ियों में क्यों?

अनेक जंगली पशुओं जैसे चीता, बाघ, हाथी आदि के नगरों में प्रवेश करने और जीवन एवं सम्पत्ति को क्षति पहुँचाने की घटनाओं में वृद्धि हुई है।

मानव-वन्यजीव संघर्ष के कारण:

- वनोन्मूलन और पर्यावास के विखंडित और संकुचित होने के कारण, पशुओं के पर्यावास की गुणवत्ता में गिरावट आई है और उनके लिए भोजन हेतु किए जाने वाले शिकार का क्षेत्र सीमित हो गया है।
- मानव जनसंख्या में वृद्धि और भूमि के उपयोग में परिवर्तन।
- संरक्षित क्षेत्रों के रूप में अधिसूचित क्षेत्रों से बाहर बड़ी संख्या में वन्यजीवों और पक्षियों की उपस्थिति। वन्यजीव विशेषज्ञों का अनुमान है कि भारत में 29 प्रतिशत बाघ संरक्षित क्षेत्र के बाहर विचरण करते हैं।

समस्या के समाधान के लिए उपलब्ध कानून

- 2011 में **पर्यावरण मंत्रालय द्वारा निर्धारित प्रोटोकॉल** में, किसी तेंदुए के मानवीय पर्यावास में आ जाने की स्थिति में किये जाने वाले उपायों को सूचीबद्ध किया गया है।
- जंगली मांसाहारी पशु सामान्यतः अपनी आत्मरक्षा में ही प्रहार करते हैं अतः उन्हें उत्तेजित करने वाले कार्यों से बचना चाहिए।
- क्षेत्र को अवरोधों से घेर कर रक्षित किया जाना चाहिए और भीड़ एवं स्थानीय लोगों को वन्यजीव से दूर रखने के सभी उचित प्रयास किये जाने चाहिए।

VISION IAS

- **इसके लिए स्थानान्तरण** का भी सुझाव दिया गया है। हालाँकि इससे समस्या का कोई स्थायी समाधान नहीं होता है अपितु उन्हें केवल किसी दूसरी जगह स्थानांरित कर दिया जाता है। वास्तव में अध्ययनों से पता चलता है कि स्थानान्तरण के पश्चात मानव-वन्यजीव संघर्ष में वृद्धि होती है।
- 1972 से ***लीथल कंट्रोल*** पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है। इसके अतिरिक्त *लीथल कंट्रोल* किसी क्षेत्र के मांसाहारी पशुओं के घनत्व को कम नहीं कर सकता क्योंकि, जैसा पहले उल्लेख किया गया है, चलायमान पशु शीघ्र ही खाली किये क्षेत्रों पर अधिकार स्थापित कर लेता है।

NTCA के दिशानिर्देशों में कहा गया है कि:

- किसी भी परिस्थिति में बाघ को नहीं मारा जाना चाहिए जब तक यह नरभक्षी नहीं बन जाता।
- "नर-भक्षी" के रूप में बाघ को मारने का विकल्प, उसे पकड़े जाने के सभी विकल्पों के समाप्त होने पर अंतिम विकल्प के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए।
- किसी बाघ को नरभक्षी घोषित करने से पहले इसके कारणों को लिखित रूप में मुख्य वन संरक्षक द्वारा दर्ज किया जाना चाहिए।
- DNA प्रोफाइलिंग के लिए बालों के टुकड़ों को एकत्र करने के अतिरिक्त कैमरे के माध्यम से या प्रत्यक्ष रूप से देखने या पदचिन्हों के ज़रिये इस कार्य के लिए एक गठित समिति के माध्यम से बाघ की पहचान की जानी चाहिए।

वैकल्पिक सुझाव:

- तेंदुए अनुकूलनशील शिकारी होते हैं। जब तक भोजन और आश्रय उपलब्ध हो, तब तक ये मानव अधिवासों के समीप रहने में कुशल होते हैं। इसलिए, इनके प्रति निम्नलिखित कदमों के माध्यम से सहिष्णुतापूर्ण व्यवहार अपनाये जाने की आवश्यकता है:
- **पशुधन की सुरक्षा की तकनीकों जैसे** बेहतर एवं सुरक्षित बाड़ा और आश्रयस्थल आदि में सुधार।
- **जैविक कचरे को कम करना** ताकि जंगली कुत्तों और सूअरों की जनसंख्या कम हो, जिससे उस क्षेत्र के प्रति तेंदुओं का आकर्षण कम हो जायेगा।
- स्थानीय समुदाय द्वारा प्रशासित **एक सशक्त और सामयिक क्षतिपूर्ति / बीमा योजना।**
- वन्यजीवन के ह्रास (Fragmentation) को रोका जाना चाहिए और माइग्रेटरी कॉरिडोर जैसे इको ब्रिज, को प्राथमिकता के आधार पर अधिसूचित किया जाना चाहिए।
- संयुक्त वन प्रबन्धन समिति के साथ समन्वय से जोखिम मानचित्र एवं क्षेत्रीय स्तर की संरक्षण रणनीति विकसित करनी चाहिए।

2.3.2. वर्मीन मुद्दा: किसानों के लिए खतरा, वनों के लिए वरदान

(VERMIN ISSUE: Menace to Farmer Boon to Forest)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- तमिलनाडु सरकार द्वारा वन विभाग के कर्मियों को सीमित समय के लिए जंगली सूअरों की जनसंख्या को नियंत्रित करने की अनुमति प्रदान करने की योजना बनाई गई है।

सम्बंधित मुद्दे

- पारिस्थितिक वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि जंगली सूअर को मारने से जैव विविधता को नुकसान होगा।
- जंगली सूअर: खाद्य श्रृंखला में *स्कावेंजर*
- जंगली सूअर मांसाहारी जानवरों के लिए एक महत्वपूर्ण शिकार होता है। इस योजना से इन मांसाहारी जानवरों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना है।
- जंगली सूअर वनीय क्षेत्रों में कुछ बीजों के अंकुरण में भी सहायक होते है।
- हालाँकि जंगली सूअर किसानों को नुकसान पहुँचाने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारको में से एक है। ये कसावा, केला, चावल और तिलहन जैसी फसलों को नष्ट कर देते हैं।

VISION IAS

वर्मीन क्या है?

- कोई भी जानवर जो मानव और इसकी आजीविका विशेषकर कृषि, के लिए खतरा पैदा करते है उन्हें वन्यजीव संरक्षण अधिनियम-1972 की अनुसूची-V के तहत वर्मीन के रूप में वर्णित किया सकता है।
- राज्य सरकार जंगली जानवरों की एक सूची केंद्र सरकार को भेज सकती है ताकि उन्हें चयनात्मक वध के लिए वर्मीन घोषित किया जा सके।
- वन्यजीव संरक्षण अधिनियम-1972, प्रत्येक राज्य के मुख्य वन्यजीव वार्डन को पशुओं को मारने के लिए सशक्त बनाता है।
- जंगली सूअर, नीलगाय और रीसस बंदर को अनुसूची-2 एवं 3 के तहत संरक्षण प्रदान किया गया है लेकिन विशेष परिस्थितियों में इनका शिकार किया जा सकता है।

2.3.3. इको-सेंसिटिव जोन

(Eco-Sensitive Zone)

सुर्खियों में क्यों ?

मुंबई में सरकार द्वारा संजय गांधी राष्ट्रीय उद्यान में 59.46 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को इको-सेंसिटिव जोन (ESZ) घोषित करने के लिए अंतिम अधिसूचना जारी की गई है ।

इको-सेंसिटिव जोन क्या है?

- यह संरक्षित क्षेत्रों जैसे नेशनल पार्क्स और वन्यजीव अभयारण्यों के आसपास के क्षेत्र को और अधिक सुरक्षित करने के लिए इन्हें बफर जोन्स के रूप में निर्मित किये गए हैं।
- पर्यावरण की रक्षा हेतु ऐसे क्षेत्रों के आसपास की गतिविधियों को प्रबंधित एवं विनियमित किया जाता है।
- पर्यावरण एवं वन मंत्रालय द्वारा पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 3 के तहत ESZ को अधिसूचित किया गया है।

ESZ के दिशानिर्देशों में गतिविधियों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया है :

- निषिद्ध: वाणिज्यिक खनन, आरा मिल की स्थापना, प्रदूषक उद्योगों की स्थापना, बड़ी जल विद्युत परियोजनाओं की स्थापना आदि
- विनियमित: पेड़ों की कटाई, होटल एवं रिसॉर्ट की स्थापना, बिजली के तारों को बिछाना, कृषि प्रणालियों में प्रबल परिवर्तन आदि
- अनुमति प्राप्त: स्थानीय समुदायों द्वारा की जा रही कृषि और बागवानी प्रथाए, वर्षा जल संरक्षण, जैविक खेती आदि।

ESZ का विरोध क्यों हो रहा है

कई राज्य खनिज और संसाधनों की उपस्थिति के कारण ESZ का विरोध कर रहे हैं।

- कई क्षेत्रों में स्थानीय लोग भी विभिन्न गतिविधियों पर प्रतिबन्ध लगने के कारण आजीविका खो देते हैं और इसलिए वे ESZ का विरोध करते हैं ।

आगे की राह

- स्थानीय समुदायों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और ESZ के सफल कार्यान्वयन के लिए उनकी भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए।
- राज्य सरकारों को विकास की आवश्यकता, स्थानीय लोगों की आकांक्षाओं और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन रखना चाहिए।

2.3.4. तटीय क्षेत्रों का संरक्षण

(Preservation of Coastal Areas)

तटीय विनियमन क्षेत्र में मंजूरी प्राप्त करने हेतु वेबसाइट: पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री श्री अनिल माधव दवे ने तटीय विनियमन क्षेत्र (Coastal Regulation Zone-CRZ) में मंजूरी प्राप्त करने के लिए वेब पोर्टल का शुभारंभ किया।

- वेब आधारित प्रणाली, परियोजना प्रस्तावकों और संबंधित राज्य/ केंद्र शसित प्रदेशों जैसे राज्य तटीय क्षेत्र प्रबंधन प्राधिकरण (State Coastal Zone Management Authorities - SCZMAs) और नगरपालिका/नगर नियोजन एजेंसियों को अपने प्रस्तावों की स्थिति (status) पर नज़र रखने में सक्षम बनाती हैं।

तटीय विनियमन क्षेत्र (CRZ) के बारे में

- 1991 में पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 के तहत प्रथम तटीय विनियमन क्षेत्र (CRZ) की अधिसूचना जारी की गयी। CRZ अधिसूचना के अनुसार, उच्च ज्वार रेखा (HTL) से 500 मीटर तक तटीय भूभाग और ज्वारीय उतार-चढ़ाव के सीमा क्षेत्र में आने वाले क्रीक, ज्वारनदमुख, पश्च जल और नदियों के तट से 100 मीटर तक के क्षेत्र को तटीय विनियमन क्षेत्र (CRZ) कहा जाता है।
- भूमि के अनुमत उपयोग के अनुसार CRZ को चार श्रेणियों CRZ (1-4) में विभाजित किया गया है।

तटीय विनियमन क्षेत्र (CRZ) का वर्गीकरण

- वर्ग I (CRZ-I): निम्न ज्वार रेखा एवं उच्च ज्वार रेखा के बीच का क्षेत्र।
- वर्ग II (CRZ-II): जो क्षेत्र पहले से ही तटरेखा तक या उसके निकट विकसित किए गए हैं।
- वर्ग III (CRZ-III): वे क्षेत्र जो तुलनात्मक रूप से अपने प्राकृतिक रूप में विद्यमान हैं और जो श्रेणी- I या II से संबंधित नहीं होते हैं। इसमें ग्रामीण क्षेत्रों (विकसित और अविकसित) और शहरी क्षेत्रों में अवस्थित तटीय क्षेत्र शामिल होंगे।
- वर्ग IV (CRZ-IV): अंडमान निकोबार, लक्षद्वीप और छोटे द्वीपों पर CRZ -I, CRZ -II या CRZ-III के रूप में चिन्हित क्षेत्रो को छोड़कर शेष तटीय क्षेत्र।

CRZ पर **शैलेश नायक** समिति **रिपोर्ट :**वर्ष 2011 की तटीय विनियमन क्षेत्र (CRZ) अधिसूचना के संबंध में उठाए गए मुद्दों पर विचार करने के लिए **शैलेश नायक** की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया था।

- समिति ने पाया है कि 2011 के नियमों ने, विशेष रूप से निर्माण से संबंधित आवास, झुग्गी पुनर्विकास, जीर्ण संरचनाओं और अन्य खतरनाक इमारतों के पुनर्विकास को प्रभावित किया है।
- जनवरी 2015 से, इस रिपोर्ट से संदर्भित कई कमियां सामने आयी जैसे:
- CRZ-VI जोन में स्मारकों / समाधियों के निर्माण की अनुमति देना (गुजरात में सरदार पटेल की प्रतिमा);
- CRZ-II ज़ोन में उच्च ज्वार लाइन के 500 मीटर के अन्दर गगनचुंबी इमारतों (चेन्नई) को अनुमति देने का प्रस्ताव;
- बंदरगाहों, सड़कों, घाटों, पोताश्रयों और इस तरह की अन्य सुविधाओं के लिए समुद्र से भूमि की पुनःप्राप्ति (मुंबई) की अनुमति देने का प्रस्ताव।
- रिपोर्ट में कई राज्यों की मांग के आधार पर राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों की सरकारों के साथ-साथ स्थानीय अधिकारियों को शक्तियों के हस्तांतरण का प्रस्ताव है।
- रिपोर्ट यह भी प्रस्तावित करती है कि CRZ-II और CRZ-III दोनों ज़ोन (उच्च ज्वार लाइन से 500 मीटर की दूरी पर जो कि क्रमशः विकसित और अपेक्षाकृत अबाधित हैं) राज्य या केन्द्रीय मंत्रालयों के पर्यावरण विभागों के तहत नहीं आने चाहिए और इसके बजाय इन्हें राज्य के शहर और योजना विभागों के नियमों द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिए।

- यह "गैर विकास ज़ोन" के लिए "घनी आबादी वाले" क्षेत्रों से मौजूदा 200 मीटर की दूरी को कम करके सिर्फ 50 मीटर की दूरी करने का प्रस्ताव करती है।

2.3.5. जैव-विविधता के संरक्षण में प्रौद्योगिकी का उपयोग

(Use of Technology in Biodiversity Conservation)

साइंस पत्रिका में प्रकाशित एक अध्ययन में यह सुझाव दिया गया है कि भले ही प्रजातियों और उनके आश्रय स्थल के संरक्षण के लिए प्रौद्योगिकी के प्रयोग को लेकर चिंताएँ उपस्थित हैं तथापि इस हेतु प्रौद्योगिकी को निरंतर महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहना चाहिए।

- **आंकड़ों का संग्रह: प्रजातियों, विशेषकर जो अब तक खोजी नहीं गयी हैं, के सम्बन्ध में** पर्याप्त आंकड़ों का अभाव (उनके स्थान और उनके विलुप्त होने की दर के सम्बन्ध में) उनके अध्ययन में बाधक है। उनके अध्ययन के लिए आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।
- **हॉटस्पॉट का संरक्षण:** प्रजातियों के सरंक्षण के लिए हॉट स्पॉट्स की सुरक्षा सबसे प्रभावी रणनीति हो सकती है। इन महत्त्वपूर्ण स्थानों के अधिक सटीक अध्ययन के लिए आंकड़ों की व्यापक आवश्यकता है। अधिक उन्नत प्रौद्योगिकी इसमें सहायक हो सकती है।
- **वैज्ञानिकों, जनता और सरकार के बीच सहयोग:** ऑनलाइन डेटाबेस, स्मार्टफोन ऐप, क्राउड सोर्सिंग और नये हार्डवेयर उपकरणों से आंकड़ों का एकत्रीकरण आसान हो गया है। भू-उपयोग में परिवर्तन और लाखों शौकिया सिटिज़न साइंटिस्ट्स द्वारा एकत्रित किए गए प्रजातियों के अवलोकन सम्बन्धी आंकड़ों के साथ मिल कर प्रौद्योगिकी वैज्ञानिकों तथा नीति निर्माताओं को हमारे ग्रह की जैव विविधता और इसके खतरों की अधिक सूक्ष्मता से निगरानी हेतु सक्षम बनाती है।
- **अंतर्राष्ट्रीय सहयोग:** जटिल और बढ़ते हुए पर्यावरण खतरों के युग में एक अधिक प्रभावी संरक्षण नीति को विकसित करने के लिए अंतर्देशीय तथा अंतर्विश्वविद्यालयीय स्तर पर आंकड़ों को साझा करने की आवश्यकता है। संकटग्रस्त प्रजातियों की रेड लिस्ट, WWF की प्रोटेक्टेड प्लेनेट रिपोर्ट, लिविंग प्लेनेट रिपोर्ट इत्यादि इसके उदाहरण हैं।
- **संरक्षित क्षेत्रों के स्वास्थ्य की निगरानी:** भूदृश्य का हाइपरस्पेक्ट्रल चित्र स्थलीय और जलीय दोनों प्रणालियों में रासायनिक और भूवैज्ञानिक मापदंडों और जैविक प्रक्रियाओं के समूह पर विस्तृत जानकारी प्रदान कर सकता है। पर्यावास के भूभाग और यहां तक कि अलग-अलग जानवरों की नियमित रूप से निगरानी करने के लिए ड्रोन का अधिकाधिक उपयोग किया जा रहा है। इस प्रकार रिमोट सेंसिंग यह सुनिश्चित करने में सहायता कर सकती है कि पर्यावास स्वस्थ बने रहें तथा जीवों की रक्षा करें।

दिशा में नवीनतम प्रगति : बाघों की निगरानी करने के लिए ड्रोन का उपयोग किया जाएगा

- शीघ्र ही देश के चयनित बाघ अभ्यारणों में संरक्षण ड्रोन तैनात किए जायेंगे जो वन्यजीव संरक्षण में महत्वपूर्ण तकनीकी हस्तक्षेप के शुभारंभ का संकेत होगा।
- ड्रोन रियल टाइम के आधार पर दुर्गम वन-क्षेत्रों से पशुओं के आवागमन, शिकार गतिविधियों और वन में आग लगने की घटनाओं पर विजुअल आंकड़े एकत्रित और प्रेषित करेंगे।

- **पुन:स्थापन पारिस्थितिकी (Restoration ecology)** सीमांत और निम्नीकृत भूमि का संरक्षण मूल्य बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।
- **रोबोट या शायद साइबोर्ग जीवों** (जब किसी जीव के मस्तिष्क से जुड़ी माइक्रोचिप का उपयोग करके दूर से मनुष्यों द्वारा उसका नियंत्रण किया जाये) का भी उन क्षेत्रों में प्रवेश करने के लिए उपयोग किया जा सकता है जहाँ तक मनुष्य नहीं पहुँच सकते या उन्हें नहीं पहुँचना चाहिए। इनका उपयोग मनुष्यों और संरक्षण के लिए लक्षित प्रजातियों के बीच अवांछित संपर्क सीमित करने के लिए भी किया जा सकता है।
- बायोटेलीमेट्री उपकरणों की व्यापक तैनाती और मोबाइल कम्युनिकेशन नेटवर्क के उपयोग से जंगल में प्रजनन स्थिति और अन्य शारीरिक (फिजियोलॉजिकल) मापदंडों की निगरानी सुविधाजनक हो सकती है। ब्रेन मैपिंग की उन्नत तकनीकें अंततः ऐसी

प्रौद्योगिकियों पर लागू की जा सकती हैं जो यह बता सकें कि प्रजातियां अपने पर्यावरण के प्रति क्या अनुभव करती हैं। इस तरह की जानकारी से उन तनाव कारकों की पहचान करने और उनमें सुधार लाने में सहायता मिल सकती है जो प्रजनन या अस्तित्व में बाधक हो सकते हैं। इसके माध्यम से पशु कल्याण में काफी सुधार किया जा सकता है।

- **समर्थित प्रजनन तकनीक:** चिड़ियाघरों, ऐक्वेरिया और वनस्पति उद्यानों में कैप्टिव पापुलेशन के लिए विकसित की गई तकनीकों का वनों में भी उपयोग किया जा सकता है।
- **शांतिपूर्ण सह-आवास (कोहैबिटेशन) को बढ़ावा देना:** पशु आवागमन पर रियल टाइम आंकड़ों से वन्यजीव-मानव अंतर्क्रिया की निगरानी में सहायता मिल सकती है। उन्नत निगरानी तकनीकों के माध्यम से पशु व्यवहार के सम्बन्ध में प्राप्त संवर्धित ज्ञान से आगे चलकर प्रबंधन तकनीकों में सुधार किया जा सकता है।
- अत्यधिक विपणन योग्य जैविक उत्पादों को तैयार करने के लिए वनस्पतियों एवं पशुपालन के क्षेत्र में प्राप्त की गयी तकनीकी उन्नति से इनके अवैध व्यापार को हतोत्साहित किया जा सकता है (उदाहरण के लिए, क्रोकोडाइल फार्मिंग से खाल के लिए किए जाने वाले मगरमच्छों के शिकार में कमी आई है)। यहां तक कि यह भी संभव है कि भविष्य की तकनीक सबसे अधिक मांग वाले पशु उत्पादों के लिए कृत्रिम संश्लेषण का विकल्प भी प्रस्तुत कर सके, उदाहरणस्वरुप- गैंडे के सींग के ऊतक की 3-D प्रिंटिंग।

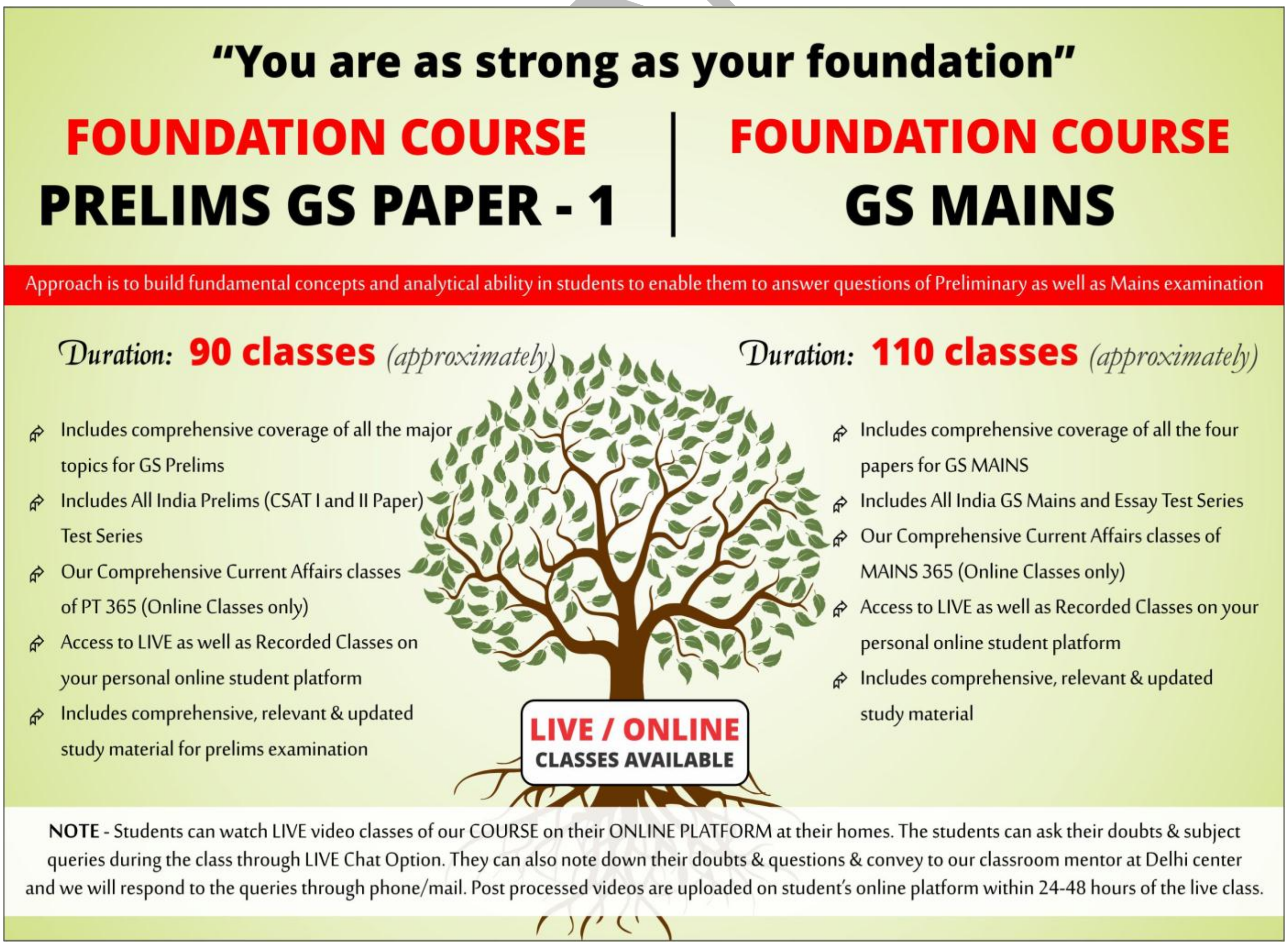

3. जलवायु परिवर्तन

(CLIMATE CHANGE)

3.1. समझौतों और अभिसमयों से सम्बंधित समाचार

(News On Agreements And Conventions)

3.1.1. किगाली समझौता

(Kigali Agreement)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- 197 देशों ने रवांडा के किगाली में हाइड्रोफ़्लोरो कार्बन (HFC) श्रेणी की ग्रीन हाउस गैसों (GHGs) के उत्सर्जन को कम करने के लिए एक नया ऐतिहासिक समझौता किया है।
- इसमें की जाने वाली कमी वर्ष 2100 तक ग्लोबल वार्मिंग में 0.5 डिग्री सेल्सियस तक की कमी ला सकती है।

महत्व

- मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल में केवल ओजोन परत के क्षरण के लिए जिम्मेदार गैसें (जैसे HFCs) ही शामिल थीं। किगाली संशोधन 1987 के मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल में संशोधन कर ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेदार गैसों को भी शामिल करता है।
- किगाली समझौता 2019 से सदस्य देशों के लिए बाध्यकारी हो जाएगा।
- इसमें गैर-अनुपालन के मामले में दंड का भी प्रावधान है।
- यह संशोधन पूर्व-औद्योगिक काल की तुलना में वैश्विक तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखते हुए पेरिस समझौते के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए पूरी तरह से महत्वपूर्ण माना जा रहा है।
- इसके तहत विकसित देश वैश्विक स्तर पर अरबों डॉलर का अतिरिक्त अनुदान भी प्रदान करेंगे। विकसित देशों से अतिरिक्त धन की सही मात्रा पर 2017 में मॉन्ट्रियल में पक्षकारों की अगली बैठक में सहमति बन जाएगी।

पदार्थों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल क्या हैं?

- मूल रुप से 1987 में हस्ताक्षरित और काफी हद तक 1990 और 1992 में संशोधित इस संधि का मुख्य लक्ष्य पृथ्वी की संवेदनशील ओजोन परत की रक्षा के क्रम में ओजोन क्षयकारी पदार्थों के उत्पादन और खपत को कम करना है।
- यह समझौता कुछ सफल बहुपक्षीय वार्ताओं में से एक है।

विभिन्न समयसीमा

सभी हस्ताक्षरकर्ता देशों को HFCs की कटौती की अलग-अलग समय-सीमा के साथ तीन समूहों में विभाजित किया गया है। यह समझौता समूहीकरण का एक नया रूप प्रदर्शित करता है:

- **पहला समूह:** इसमें अमेरिका और यूरोपीय संघ (EU) के संपन्न देश शामिल हैं। वे 2018 तक HFCs के उत्पादन और खपत को स्थिर कर लेंगे। वे 2036 तक इसे 2012 के स्तर से लगभग 15% तक कम करेंगे।
- **दूसरा समूह:** इसमें चीन, ब्राजील और सम्पूर्ण अफ्रीका के देश शामिल हैं। वे 2024 तक HFCs के उपयोग को स्थिर कर देंगे और 2045 तक इसे 2021 के स्तर से 20% तक कम कर देंगे।
- **तीसरा समूह:** इसमें भारत, पाकिस्तान, ईरान, सऊदी अरब आदि देश शामिल हैं। वे 2028 तक HFCs के उपयोग को स्थिर कर देंगे और 2047 तक इसे 2025 के स्तर से 15% तक कम करेंगे।

VISION IAS

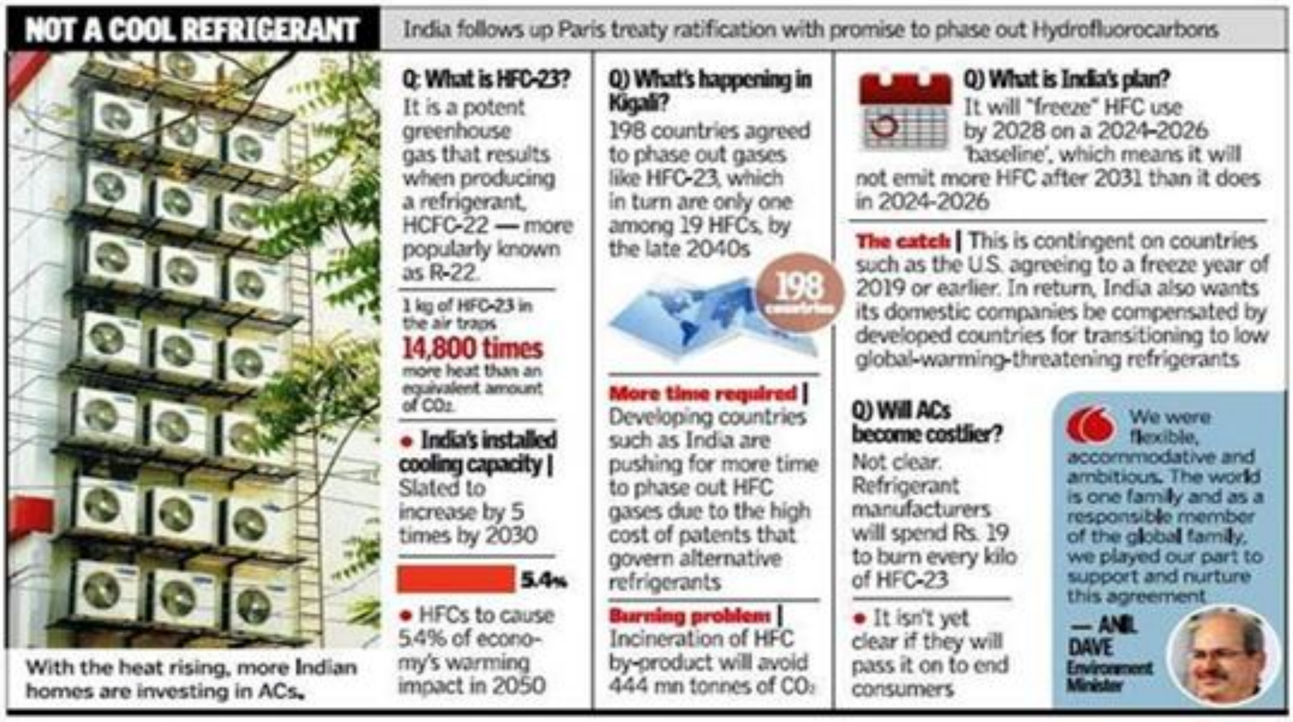

भारत द्वारा उठाए गए कदम: HFC-23 के उपयोग को समाप्त करने के लिए

- हाल ही में, भारत ने 14,800 वैश्विक तापन क्षमता (global warming potential-GWP) वाली एक सुपर ग्रीनहाउस गैस HFC-23 (ट्राईफ्लोरो-मीथेन) पर घरेलू कार्य-योजना की घोषणा की जोकि HCFC-22 (क्लोरो-डाईफ्लोरो-मीथेन) के सह-उत्पाद के रूप में उत्पादित होती है। वर्तमान में, HCFC-22 भारत में आम तौर पर सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला प्रशीतक है।
- भारत ने घरेलू बाजार पर पूर्ण नियंत्रण रखने वाले पांच निर्माताओं को HFC -23 को संग्रहीत करने और दहन करने का आदेश दिया है, जिससे की यह वातावरण में निर्मुक्त न हो सके। यह कार्रवाई अगले 15 वर्षों में लगभग 100 मिलियन टन कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन के बराबर HFC-23 के उत्सर्जन को समाप्त करेगी।
- इसने कंपनियों को HFC-23 के संग्रहण को सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त भंडारण क्षमता का निर्माण करने और उसका अनुरक्षण करने का भी निर्देश दिया है।
- कंपनियों को इस पर्यावरण वाह्यता (environmental externality) की लागत को समावेशित करने और निर्धारित समय को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त भंडारण सुविधा का निर्माण करने और दहन भट्टी को यह सुनिश्चित करते हुए चलाने के लिए कहा गया है कि HFC-23 का उत्सर्जन वातावरण में न हो।

3.1.2. पेरिस समझौता: हाल ही में हुए विकास

(Paris Agreement: Recent Developments)

पृष्ठभूमि

पेरिस समझौते ने इंटरनेशनल क्लाइमेट एक्शन के लिए व्यापक लक्ष्यों और फ्रेमवर्क को निर्धारित किया है, किन्तु कई विस्तृत विवरणों को बाद के लिए छोड़ दिया गया है। इन विस्तृत विवरणों को निर्धारित करने के लिए प्रक्रिया गत नवंबर में मराकेश में होने वाले COP22 में आरम्भ हुई। यह प्रक्रिया बॉन, मई 2017, के "इंटरसेशनल" वार्ता में भी जारी रही।

- इसी बीच पेरिस समझौता 4 नवंबर 2016 को लागू हुआ। यह कन्वेंशन के कम से कम 55 भागीदार देशों अर्थात कुल अनुमानित ग्लोबल ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में 55% का योगदान करने वाले देशों द्वारा अनुसमर्थन, अनुमोदन, अंगीकरण के 30 दिन बाद लागू हुआ।

मराकेश कॉप (कॉन्फ्रेंस ऑफ द पार्टीज)

- मराकेश, मोरक्को में आयोजित UNFCCC के नवीनतम CoP22 में देशों ने पेरिस समझौते हेतु उत्कृष्ट प्रति (print) तैयार करने के लिए वार्ता की। यह नियम बनाने की मांग करता है जिससे कि कानून अर्थात पेरिस समझौते के कार्यान्वयन में मदद मिलेगी।
- चूंकि समझौता 2020 से लागू हो जाएगा, इसलिए विभिन्न देश 2018 तक नियमावली को पूरा करने के लिए सहमत हो गए हैं।

चिंताएँ:

विकसित और विकासशील देशों के बीच महत्वपूर्ण मुद्दों जैसे 'जलवायु वित्त', 'अनुकूलन कोष' और 'ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी' में वृद्धि करने से सम्बंधित मतभेद आज भी कायम हैं।

- संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में विकसित देशों ने पेरिस समझौते को विकृत करने के लिए नियम बनाने की प्रक्रिया का उपयोग करने की कोशिश की।
- विकसित देश औपचारिक वार्ता में जलवायु वित्त (क्लाइमेट फाइनेंस) से सम्बंधित OECD रिपोर्ट पर ध्यान आकर्षित करने में सफल रहेl वह भी तब जब विकासशील देशों ने यह दावा किया था कि विकसित देश संदिग्ध लेखा पद्धति का इस्तेमाल करते हैं। OECD रिपोर्ट अब क्लाइमेट फाइनेंस को परिभाषित करने के लिए एक आधार बन सकती है।
- समानता और विभेदकारी जिम्मेदारियों के सिद्धांत अभी भी प्रस्तावित हैं और उनके परिचालन पर पेरिस समझौते की नियमावली में कोई प्रगति नहीं हुई है।
- अमीर देशों के लिए बनाए गए रोड मैप, जिसमें उन्हें 2020 से प्रति वर्ष $ 100 बिलियन की धनराशि प्रदान करना है, पहले की तुलना में अधिक संदिग्ध लग रहा है।
- 2020 से पहले अमीर देशों द्वारा अधिक उत्सर्जन कटौती या जलवायु वित्त में वृद्धि करने का कोई उल्लेख नहीं है।
- जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन हेतु धन की आपूर्ति, मराकेश सम्मेलन से प्राप्त सकारात्मक घटनाक्रम में से एक था। पेरिस समझौते के तहत अनुकूलन कोष की भरपाई के लिए मांग की गयी थी और इसकी पूर्ति 80 मिलियन डॉलर के साथ की गयी थी। हालांकि, इस पर चर्चा अगले CoP में जारी रहेगी।
- सुभेद्य (vulnerable) देशों को नुकसान और क्षति वित्त प्रदान करने के मुद्दे पर भी अगले वर्ष चर्चा की जाएगी।
- 'जलवायु न्याय' (Climate Justice) हेतु भारत की मांग के लिए कोई प्लेसहोल्डर नहीं मिला है। भारत, मराकेश में 'जीवन शैली के मुद्दों' के लिए एक दिखावटी प्रविष्टि प्राप्त करने में भी असमर्थ रहा।

बॉन क्लाइमेट चेंज

"इंटरसेशनल" वार्ताएं प्रतिवर्ष वार्षिक COP सम्मेलन के मध्य बॉन में आयोजित की जाती हैंl इनका उद्देश्य वर्ष के अंत मे होने वाली बड़ी बैठक से पहले बातचीत को आगे बढ़ाना हैl

UNFCCC द्वारा बॉन क्लाइमेट चेंज कांफ्रेंस का आयोजन मई 2017 में जर्मनी के बॉन शहर में किया गयाl इसका उद्देश्य पेरिस समझौते के क्रियान्वयन को आगे बढ़ाना थाl इसमें इस समझौते की समय सीमा 2018 किए जाने के लिए सहमति व्यक्त की गयी हैl

एजेंडे में तय किये गये विभिन्न रणनीतिक बिंदु:

- **वैश्विक मूल्यांकन (Global stocktake):** पेरिस समझौते में शामिल विभिन सदस्य वर्ष 2023 में और उसके बाद प्रत्येक पांच वर्ष पर अपनी सामूहिक प्रगति का **"वैश्विक मूल्यांकन"** करने के लिए सहमत हुए।
- सदस्य देश, प्रक्रिया की संभाविता (स्कोप) के मुद्दे पर तथा मूल्यांकन किस आधार पर किया जाएगा इस विषय पर असहमत रहे।
- **पारदर्शिता:** "संवर्धित पारदर्शिता ढांचे" का उद्देश्य देशों द्वारा अपनी प्रगति की रिपोर्ट देने और समीक्षा करने के तरीकों को औपचारिक रूप प्रदान करना है l इसके साथ-साथ उन्होंने दूसरों को जो सहायता प्रदान की है, उसे औपचारिक रूप देकर

VISION IAS

''पारस्परिक विश्वास और आत्मविश्वास का निर्माण करना और प्रभावी कार्यान्वयन को बढ़ावा देना" भी इसका उद्देश्य है। पारदर्शिता के मसले पर बातचीत अभी भी इसी पर केंद्रित है कि किन विभिन्न क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाना चाहिए और इस सम्बन्ध में प्रक्रियाएं और दिशा-निर्देश क्या होने चाहिए।

- **जलवायु वित्त:** जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन और इसके प्रभावों को कम करने के लिए वित्तीय प्रबंधन पर 2009 में सहमति व्यक्त की गई। इसके तहत प्रावधान किया गया कि, विकसित देश संयुक्त रूप से, विकासशील देशों की सहायता करने के लिए 2020 तक प्रति वर्ष 100 बिलियन डॉलर का सहयोग प्रदान करेंगे। पेरिस समझौते में पुन: इस जलवायु वित्त के महत्व को स्वीकार किया गया।
  इस विषय पर संपन्न वार्ता मुख्यतः जलवायु वित्त का हिसाब रखने और इस पर नजर रखने पर केन्द्रित रही। फंड का भविष्य भी विवाद का एक विषय रहा। इस फण्ड को 2001 में क्योटो प्रोटोकॉल के एक भाग के रूप में सृजित (अपेक्षाकृत कम धनराशि से) किया गया था। जहां, यूरोपीय संघ ने प्रशांत क्षेत्र के लिए फंड की घोषणा की है, वहीं अमेरिका ने भविष्य में अंशदान न देने की घोषणा की है।
- **कार्बन बाजार:** इस सम्बन्ध में कोई ठोस प्रगति नहीं हुई है।

पेरिस समझौता (COP 21)

पेरिस समझौते द्वारा 2020 के बाद की अवधि के दौरान जलवायु परिवर्तन के विरूद्ध कार्रवाई करने के लिए विश्व के सभी देशों के लिए एक कार्य योजना प्रस्तुत की गई है। पेरिस समझौता विभिन्न राष्ट्रीय स्थितियों के आलोक में जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध तथा वैश्विक तापन को सीमित करने के लिए वैश्विक प्रयासों को प्रोत्साहित करता है। इसके द्वारा समता, साझा किन्तु विभेदीकृत उत्तरदायित्व और संबंधित क्षमताओं (CBDR-RC) को प्रतिबिंबित किया गया है।

पेरिस समझौता क्योटो प्रोटोकॉल से कैसे भिन्न है:

यह वैश्विक समझौता क्योटो प्रोटोकॉल का स्थान लेगा।

- क्योटो प्रोटोकॉल के विपरीत, यह सभी देशों के लिए जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध कार्रवाई करने हेतु फ्रेमवर्क प्रदान करता है। जलवायु न्याय (क्लाइमेट जस्टिस) और संधारणीय जीवन शैली जैसी अवधारणाओं पर बल देते हुए पेरिस समझौता पहली बार UNFCCC के अंतर्गत, साझा उद्देश्य हेतु, सभी देशों को एक मंच पर लाता है।
- इस समझौते में क्योटो प्रोटोकॉल द्वारा समर्थित *टॉप-डाउन* दृष्टिकोण को दोबारा अपनाने की बजाय *बॉटम अप* दृष्टिकोण अपनाया गया है। *टॉप-डाउन* दृष्टिकोण के तहत प्रत्येक देश के लिए ग्रीनहाउस गैस के उत्सर्जन को कम करने का एक निश्चित लक्ष्य निर्धारित किया जाता था जबकि *बॉटम-अप* दृष्टिकोण में प्रत्येक देश को ग्रीनहाउस गैस का उत्सर्जन कम करने के लिए अपनी स्वयं की राष्ट्रीय योजना प्रस्तुत करने की अनुमति दी गई है।

पेरिस समझौते की मुख्य विशेषताएं

- इसका उद्देश्य वैश्विक औसत तापमान में, औद्योगिकीकरण के पूर्व के स्तर से 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक वृद्धि नहीं होने देना और वैश्विक औसत तापमान में वृद्धि को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने का प्रयास करना है।
- इसमें व्यापक और संतुलित समझौते के लिए आवश्यक सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों को कवर किया गया है, जिसमें राहत, अनुकूलन, हानि एवं क्षति, वित्त, प्रौद्योगिकी विकास एवं हस्तांतरण, क्षमता निर्माण और कार्यवाही एवं सहायता में पारदर्शिता सम्मिलित है। पेरिस समझौते के द्वारा विकासशील देशों की विकास अनिवार्यताओं को, उनके विकास के अधिकार एवं पर्यावरणीय सुरक्षा के अनुरूप उनका प्रयोग करने और कमजोर वर्ग के हितों की रक्षा करने के प्रयासों को मान्यता प्रदान करते हुए, स्वीकार किया गया है।
- यह समझौता भिन्न-भिन्न राष्ट्रीय परिस्थितियों के आलोक में समता और CBDR-RC के सिद्धांतों को प्रतिबिंबित करते हुए 'अभिसमय का कार्यान्वयन' बेहतर करने का प्रयास करता है।

VISION IAS

- इसमें विभिन्न देशों के लिए प्रत्येक पांच वर्ष में जलवायु कार्य योजनाओं के सन्दर्भ में **UNFCCC** से विचार विमर्श करने का प्रावधान किया गया है, जिसे राष्ट्रीय निर्धारित अंशदान (**NDC**) का नाम दिया गया है। प्रत्येक NDC सम्बंधित देश की पिछले पांच वर्षों में की गई प्रगति को प्रदर्शित करेगी जो इस दिशा में वैश्विक प्रयासों और लक्ष्यों को प्रोत्साहित करने में सहायक होगी।
- यह समझौता शमन-केंद्रित नहीं है और इसमें अनुकूलन, हानि और क्षति, वित्त, प्रौद्योगिकी विकास और हस्तांतरण, क्षमता निर्माण और कार्रवाई और सहायता की पारदर्शिता जैसे अन्य महत्वपूर्ण तत्व सम्मिलित हैं।
- क्लाइमेट एक्शन को 2020 के पहले ही उपयुक्त ढंग से क्रियान्वित किया जाएगा। विकसित देशों से 2020 तक संयुक्त रूप से 100 बिलियन अमरीकी डालर प्रदान करने का लक्ष्य प्राप्त करने की दिशा में एक पूर्ण रोड मैप के साथ अपनी वित्तीय सहायता का स्तर बढ़ाने का आग्रह किया गया है। यह निर्णय 2025 से पहले प्रति वर्ष 100 बिलियन अमरीकी डालर के स्तर से एक नया सामूहिक मात्रात्मक लक्ष्य भी निर्धारित करता है।
- यह समझौता अनिवार्य बनाता है कि विकसित देश विकासशील देशों को वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराएं। अन्य पक्ष भी योगदान दे सकते हैं, किन्तु विशुद्ध स्वैच्छिक आधार पर।
- इस समझौते में कार्रवाई और सहायता दोनों के लिए मजबूत पारदर्शिता ढांचा सम्मिलित है।
- पेरिस समझौते के उद्देश्य और उसके दीर्घकालिक लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में सामूहिक प्रगति का आकलन करने के लिए, सभी तत्वों को कवर करने वाला वैश्विक स्टॉकटेक वर्ष 2023 से आरंभ होकर प्रत्येक पांच वर्ष में संपन्न होगा।
- पेरिस समझौता गैर-दंडात्मक और सहयोगात्मक प्रकृति वाले एक कंप्लायंस मैकेनिज्म की स्थापना का प्रावधान करता है जो विशेषज्ञों की एक समिति की निगरानी में कार्य करेगा।

वर्तमान स्थिति: पेरिस समझौता 4 नवंबर 2016 को लागू हुआ। पेरिस समझौते (**CMA** 1) के सदस्यों की बैठक के रूप में कार्य करने वाले सम्मेलन का पहला सत्र मराकेश, मोरक्को में 15-18 नवंबर 2016 को आयोजित किया गया था। भारत द्वारा 2 अक्टूबर, 2016 को समझौते की पुष्टि की गई।

पेरिस समझौते का विश्लेषण:

सभी के लिए लाभपूर्ण स्थिति

- **विकसित राष्ट्र -** विकसित देशों द्वारा यह सुनिश्चित किया गया है कि अब से प्रत्येक देश द्वारा जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास किये जायेंगे, न कि केवल उनके द्वारा।
- **विकासशील राष्ट्र -** विकासशील देशों ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि भले ही कम प्रभावशाली रूप से लेकिन 'विभेदन' अर्थात CBDR के सभी महत्वपूर्ण सिद्धांतों को अपनाया गया है।
- **द्वीपीय राष्ट्र और अल्पविकसित देश -** जलवायु परिवर्तन के प्रति सबसे अधिक असुरक्षित ये देश, शेष विश्व को तापमान वृद्धि के विषय पर 2 डिग्री की बजाय 1.5 डिग्री का मार्ग ग्रहण करने की आवश्यकता स्वीकार कराने में सफल रहे।

पेरिस समझौते से जुड़े कुछ मुद्दे

- INDC प्रतिबद्धताएं स्वैच्छिक हैं और उन्हें पूरा करने में विफल रहने के लिए किसी दंड का प्रावधान नहीं है। यहां तक कि यदि वे पूरी हो भी जाती हैं, तो भी वे विश्व को 2 डिग्री से कम तापन के मार्ग पर नहीं ले जा पाएंगी।
- वित्त और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण से संबंधी मुद्दों पर स्पष्टता का अभाव।
- कार्बन डाइऑक्साइड के मूल्यांकन या शेष बचे कार्बन बजट के न्यायसंगत वितरण के आधार पर देशों के लिए अपडेटेड लक्ष्यों हेतु कोई तंत्र नहीं है।
- **CBDR-RC** सिद्धांत की उपेक्षा करना; विकासशील और विकसित देशों को एक ही स्तर पर रखना। हालांकि **INDC** में अभी भी कटौती के समतामूलक लक्ष्य की संभावना बनी हुई है, फिर भी यह संभावना वास्तविकता में बदल पाएगी इसकी कोई

गारंटी नहीं है। अतः, माना जाता है कि विकासशील देश अलाभ की स्थिति में होंगे।

- **बाध्यकारी लक्ष्य:** देशों ने अपने उत्सर्जन में कमी के लक्ष्य निर्धारित किये हैं। किन्तु ये केवल प्रतिज्ञाएं है। हालांकि चीन और अमेरिका ने हाल ही में पेरिस समझौते की पुष्टि की है, किन्तु प्रतिज्ञाओं (pledges) के उल्लंघन की स्थिति में क्या होगा इस बारे में स्पष्टता का अभाव है।

विकसित और विकासशील देशों के बीच टकराव:

- 'पारदर्शिता' के मुद्दे पर विकसित देश चाहते हैं कि INDCs के तहत किये गये जलवायु कार्यों की तुलना के लिए एक 'साझी और एकीकृत' (कॉमन एंड यूनिफाइड) व्यवस्था हो। जबकि विकासशील देश चाहते हैं कि पारदर्शिता प्रावधानों में CBDR-RC सिद्धांत प्रतिबिंबित हो।
- वर्षों में INDCs के कार्यान्वयन में हुई प्रगति का आकलन करने के लिए 'Stocktale' प्रावधान, जिसके संबंध में यद्यपि विकसित देश न्यूनीकरण पहलू को विशिष्ट बनाये रखना चाह रहे हैं और सभी को इसके लिए उत्तरदायी बनाना चाहते हैं, परन्तु वित्त और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के प्रावधान के लिए वे ऐसा नहीं चाह रहे हैं।
- 'ऐतिहासिक जिम्मेदारी' के सिद्धांत को अब नजरअंदाज कर दिया गया है तथा अब केवल वर्तमान उत्सर्जन को ही न्यूनीकरण रणनीति हेतु आधार बनाया गया है। इसलिए अब यदि चीन भारत से अधिक कोयले का उपयोग करता है तब भी उसे नजरंदाज कर दिया जाएगा, क्योंकि पूर्व में इसके अति उत्सर्जन (CO_2) के बावजूद इसमें क्रमिक गिरावट आई है। यह समतापूर्ण नहीं है।
- वित्त, प्रौद्योगिकी और IPR (बौद्धिक सम्पदा अधिकार) के मुद्दे पर कोई स्पष्टता नहीं है।

3.1.3. भारत: जलवायु परिवर्तन पर समझौते

(India: Agreements on Climate Change)

A. भारत ने संयुक्त राष्ट्र में पेरिस जलवायु समझौते की पुष्टि की

- भारत समझौते की पुष्टि करने वाला 62वां देश है और यह 4.1 प्रतिशत उत्सर्जन के लिए जिम्मेदार है।
- इसे महात्मा गांधी के 147वें जन्म दिवस पर अनुमोदित किया गया, जिसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप में भी मनाया जाता है।

B. क्योटो प्रोटोकोल की दूसरी प्रतिबद्धता अवधि (2013-2020)

हाल ही में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन पर क्योटो प्रोटोकॉल की दूसरी प्रतिबद्धता अवधि (2013-2020) के अनुसमर्थन को अनुमोदन प्रदान किया है।

इस अनुसमर्थन का महत्त्व:

- जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर वैश्विक सहमति बनाने में भारत की महत्त्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए यह अनुसमर्थन भारत की नेतृत्व क्षमता को सशक्त करता है। इसके ज़रिये पर्यावरण संरक्षण तथा क्लाइमेट जस्टिस के वैश्विक कार्य में संलग्न राष्ट्रों के समूह में भारत अग्रणी भूमिका निभा सकता है।
- भारत द्वारा क्योटो प्रोटोकॉल का अनुमोदन अन्य विकासशील देशों को भी इसके लिए प्रोत्साहित करेगा।
- सतत विकास प्राथमिकताओं के अनुसार इस प्रतिबद्धता अवधि के तहत स्वच्छ विकास तंत्र (CDM) परियोजनाओं का कार्यान्वयन भारत में कुछ निवेश को भी आकर्षित करेगा।

द्वितीय प्रतिबद्धता अवधि क्या है?

- क्योटो प्रोटोकाल को सर्वप्रथम 1997 में अपनाया गया था और इसकी प्रथम प्रतिबद्धता अवधि 2008 से 2012 तक थी। वर्ष 2012 में दोहा में आयोजित सम्मेलन में द्वितीय प्रतिबद्धता अवधि हेतु क्योटो प्रोटोकॉल में कुछ संशोधनों को अपनाया गया। इन संशोधनों की समयावधि 2013 से 2020 तक थी।

VISION IAS

- यह समयावधि प्रथम क्योटो प्रतिबद्धता अवधि तथा 2020 से प्रारंभ होने वाले नए वैश्विक समझौते के मध्य उपस्थित अन्तराल को भरेगी। यूरोपियन यूनियन, कुछ अन्य यूरोपीय राष्ट्र तथा आस्ट्रेलिया इस समयावधि के दौरान और अधिक उत्सर्जन कटौती हेतु सहमत हो गए हैं।

प्रथम प्रतिबद्धता अवधि तथा द्वितीय प्रतिबद्धता अवधि में अंतर:

- प्रथम प्रतिबद्धता अवधि के दौरान, 37 औद्योगिक देशों और यूरोपीय समुदाय ने ग्रीन हाउस गैसों के औसत उत्सर्जन को 1990 के स्तरों की तुलना में पांच प्रतिशत तक कम करने की प्रतिबद्धता व्यक्त की।
- द्वितीय प्रतिबद्धता अवधि के दौरान, देशों के समूह ने 2013 से 2020 तक की समयावधि में ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को 1990 के स्तरों की तुलना में 18% तक कम करने की प्रतिबद्धता व्यक्त की। हालाँकि इस समूह में शामिल देश, प्रथम प्रतिबद्धता अवधि में शामिल देशों से भिन्न हैं।

दूसरी प्रतिबद्धता अवधि का महत्व

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) की हाल ही की रिपोर्ट से पता चलता है कि जीवाश्म ईंधन और उद्योगों से उत्सर्जन में स्थिरता के कुछ संकेतों के बावजूद वैश्विक उत्सर्जन में वृद्धि जारी है।

उत्सर्जन गैप क्या है?

- उत्सर्जन गैप, 2020 में जलवायु लक्ष्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक उत्सर्जन के स्तर और इस वर्ष में अपेक्षित स्तर के बीच का अंतर है; यदि सभी देश ग्रीन हाउस गैसों में कटौती करने के अपने वादे को पूरा करते हैं।
- इसलिए, उत्सर्जन गैप से पता चलता है कि 2 डिग्री सेल्सियस सुरक्षित सीमा से नीचे ग्लोबल वार्मिंग का स्तर रखने का लक्ष्य पूरा करने के लिए देशों द्वारा कितना कुछ करने की आवश्यकता है; जैसाकि पिछले वर्ष पेरिस जलवायु समझौते में सहमति व्यक्त की गयी है।

अनुसंधान का महत्व

- रिपोर्ट से पता चलता है कि INDCs, जो भले ही पूरी तरह से लागू हैं, से केवल 2100 तक वैश्विक तापमान वृद्धि को 3.2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने में मदद मिलेगी और यह जलवायु के लिए विनाशकारी परिणाम होगा।
- इसलिए रिपोर्ट में देशों द्वारा 2020 से पहले की (पूर्व-2020) कार्रवाई पर जोर दिया गया है। इसके अनुसार, 2020 से पहले, बढ़ती हुयी महत्वाकांक्षा ग्लोबल वार्मिंग को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित करने का विकल्प रखने के लिए आखिरी मौका है।

क्योटो प्रोटोकॉल के बारे में

- क्योटो प्रोटोकॉल, 11 दिसंबर 1997 को क्योटो, जापान में स्वीकार किया गया था तथा इसे 16 फरवरी 2005 को लागू किया गया।
- 2001 में, COP 7 मराकेश, मोरक्को में प्रोटोकॉल के कार्यान्वयन के लिए विस्तृत नियम अपनाए गए तथा जिन्हें "मराकेश समझौते" के रूप में जाना जाता है। इसकी पहली प्रतिबद्धता अवधि वर्ष 2008 से प्रारंभ होकर 2012 में समाप्त हुई।
- यह प्रोटोकॉल जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (UNFCCC) के तहत विकसित किया गया था।
- इसमें भाग लेने वाले देशों ने क्योटो प्रोटोकॉल की पुष्टि की है तथा ये देश मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस (HFCs), परफ्लोरोकार्बंस (PFCs), सल्फर हेक्साफ्लोराइड (SF_6) और कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) जैसी ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

क्योटो प्रोटोकॉल की पार्टीज का वर्गीकरण

- **एनेक्स I:** UNFCCC के तहत पार्टीज, जो कन्वेंशन के एनेक्स I में सूचीबद्ध हैं। इनमें औद्योगीकृत (विकसित) देश तथा "संक्रमण काल से गुजरने वाली अर्थव्यवस्थायें" (EITs) सम्मिलित हैं। पूर्व केन्द्रीय रूप से नियोजित रूस (सोवियत) और पूर्वी

यूरोप की अर्थव्यवस्थायें EITs हैं। यूरोपीय संघ-15 (EU-15) भी एक एनेक्स I में पार्टी है।

- **एनेक्स II:** UNFCCC के तहत पार्टीज, जो कन्वेंशन के एनेक्स II में सूचीबद्ध हैं। एनेक्स II पार्टीज में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) के सदस्य सम्मिलित हैं। एनेक्स II पार्टीज से विकासशील देशों को उनके ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन (जलवायु परिवर्तन को कम करने) को कम करने और जलवायु परिवर्तन (जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन) के प्रभावों को नियंत्रित करने में सक्षम बनाने हेतु वित्तीय संसाधन प्रदान करने की अपेक्षा की जाती है।
- **एनेक्स B:** क्योटो प्रोटोकॉल के एनेक्स B में सूचीबद्ध पार्टीज, एनेक्स I पार्टीज हैं जिन्हें पहले या दूसरे दौर के क्योटो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन लक्ष्य प्रदान किए गए हैं।
- **नॉन-एनेक्स I:** UNFCCC के तहत वे पार्टीज, जो इस कन्वेंशन के एनेक्स I पार्टीज में सूचीबद्ध नहीं हैं, ये अधिकांशत: निम्न आय वाले विकासशील देश हैं। पर्याप्त रूप से विकसित होने पर विकासशील देश स्वेच्छा से एनेक्स I में सम्मिलित हो सकते हैं।
- **अल्प-विकसित देश (LDCs):** 49 पार्टीज LDCs हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के प्रति अनुकूलन में इनकी सीमित क्षमता के कारण संधि के तहत इन्हें विशेष दर्जा दिया गया है।

हरित निवेश को प्रोत्साहित करने हेतु तंत्र

- **उत्सर्जन व्यापार:** उत्सर्जन व्यापार-तंत्र, क्योटो प्रोटोकॉल के तहत पार्टीज को उनके घरेलू उत्सर्जन में कमी के लक्ष्यों को पूरा करने में मदद करने हेतु अन्य देशों से 'क्योटो यूनिट्स' (ग्रीन हाउस गैस के लिए उत्सर्जन परमिट) खरीदने की अनुमति प्रदान करता है।
- **स्वच्छ विकास तंत्र (CDM):** विभिन्न देश, क्योटो प्रोटोकॉल के नॉन एनेक्स I देशों से (परियोजना में) ग्रीनहाउस गैस रिडक्शन यूनिट्स को खरीदकर उनके घरेलू उत्सर्जन में कमी के लक्ष्यों को पूरा कर सकते हैं।
- **संयुक्त कार्यान्वयन:** कोई भी देश घरेलू स्तर पर उत्सर्जन को कम करने के लिए एक विकल्प के रूप में किसी अन्य एनेक्स I देश में उत्सर्जन में कमी करने वाली परियोजनाओं (जिन्हें "संयुक्त कार्यान्वयन परियोजना" कहा जाता है) में निवेश कर सकता है।

C. इंटरनेशनल सोलर अलायन्स (ISA)

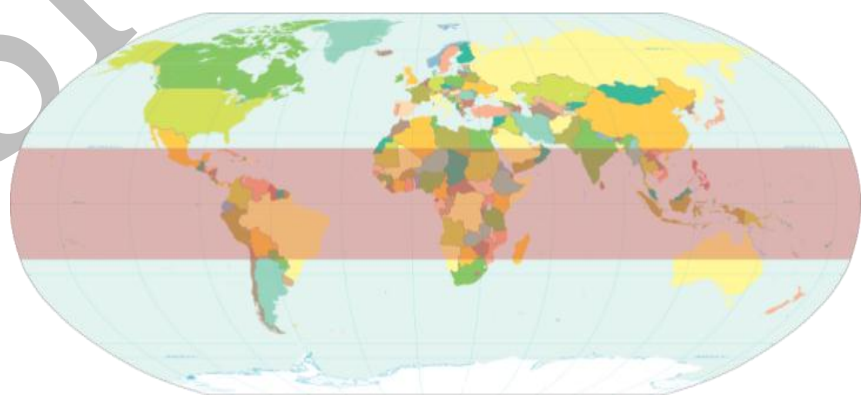

- ISA कर्क रेखा और मकर रेखा के बीच पूर्णत: अथवा आंशिक रूप से स्थित सौर ऊर्जा की सम्भावना वाले उन देशों के बीच सहयोग के लिए एक साझा प्लेटफ़ॉर्म है जो सौर ऊर्जा का बड़े पैमाने पर दोहन करना चाहते हैं।
- इस पहल की घोषणा **फ्रांस के राष्ट्रपति और भारत के प्रधान मंत्री द्वारा 2015 के अंत में पेरिस में हुए संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन के कोप-21 सम्मेलन में** की गई थी। गत वर्ष भारत दौरे पर आए फ़्रांस के राष्ट्रपति ने भारतीय प्रधानमंत्री के साथ गुरुग्राम (गुड़गाँव) में अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन के अन्तरिम सचिवालय की नीव रखी। भारत सरकार इस *अलायन्स* के सचिवालय की स्थापना के लिए भूमि प्रदान करेगी और साथ ही 30 मिलियन डॉलर की सहायता भी देगी। भारत 5 वर्ष तक इस सचिवालय का खर्च वहन करेगा।

उद्देश्य

- सौर प्रौद्योगिकी और सौर ऊर्जा के क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा देना ताकि गरीबों के लिए आय का सृजन हो सके और वैश्विक पर्यावरण की गुणवत्ता को बढाया जा सके।

VISION IAS

- सौर ऊर्जा तकनीक के अनुप्रयोग को बढ़ावा देने वाली परियोजनाओं और कार्यक्रमों को तैयार करना।
- पूंजी की लागत कम करने के लिए नए वित्तीय तंत्रों का विकास करना।
- सौर ऊर्जा से सम्बंधित सामान्य ज्ञान के लिए ई-पोर्टल का निर्माण करना।
- सौर ऊर्जा प्रौद्योगिकी के उपयोग को प्रोत्साहित करने एवं लोगों द्वारा इसके उपयोग हेतु उनकी क्रय क्षमता बढाने के लिए सुविधाएं प्रदान करना और सदस्य देशों में सौर ऊर्जा पर शोध एवं विकास की सुवधा उपलब्ध करवाना।

वर्तमान स्थिति: वर्तमान में 121 देशों ने इस समझौते पर हस्ताक्षर किये हैं।

ISA का महत्व

विश्व के लिए:

120 से अधिक देश भौगोलिक रूप से उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में स्थित हैं। इन देशों को सम्पूर्ण वर्ष पर्याप्त सूर्य का प्रकाश मिलता है अतः यहाँ सौर ऊर्जा आसानी से उपलब्ध है। इन देशों में आने वाले वर्षों में ऊर्जा की मांग में सर्वाधिक वृद्धि होने की आशा है। ISA यह सुनिश्चित करने का प्रयास है कि ये देश विद्युत् उत्पादन में तेजी से सुधार करें। इसके लिए मुख्यतः इन्हें सौर ऊर्जा का उपयोग करना चाहिए एवं साथ ही जीवाश्म ईंधन के प्रयोग से भी बचना चाहिए।

भारत को लाभ

- अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की शुरुआत ने जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने तथा कम कार्बन उत्सर्जन करते हुए विकास करने की दिशा में भारत की अग्रसक्रिय और प्रगतिशील नेतृत्व क्षमता को प्रदर्शित करने का एक मंच प्रदान किया है। ISA की स्थापना भारत को विकासशील देशों के बीच स्वच्छ उर्जा के क्षेत्र में एक नेतृत्वकर्ता के रूप में स्थापित करती है।
- यह भारत को अपना सौर लक्ष्य (2022 तक 100 GW सौर ऊर्जा को उत्पन्न करना) पूरा करने में मदद करेगा।
- इससे सौर प्रौद्योगिकी की कीमत नीचे लाने में भी मदद मिलेगी जिससे देश के विकास में और तेज़ी आएगी।
- इसने यह संकेत दिया कि भारत ISA का प्रयोग विकासशील देशों के बीच अपने नेतृत्व को मज़बूत बनाने के लिए विदेश नीति के एक उपकरण की भांति करेगा। भारत की इस भूमिका को पिछले दशकों में चीन जैसे राष्ट्रों ने अत्यधिक क्षति पहुंचायी है।

आगे की चुनौतियाँ

- वित्त पोषण– हालांकि यह गठबंधन 'अभिनव/नए वित्तीय तंत्रों' को विकसित करने के बारे में चर्चा करता है, मगर यह पूंजी कैसे मुहैया कराई जाएगी इसके बारे में स्पष्ट जानकारी नहीं दी गई है।
- प्रौद्योगिकी साझा करना (technology sharing) – आधुनिक सौर प्रौद्योगिकी कम लागत पर साझा करने के लिए एक व्यापक रूपरेखा बनाने की आवश्यकता है।

3.2. जलवायु परिवर्तन एवं पर्यावरण

(Climate Change & Environment)

3.2.1. ग्रीन ग्रोथ की प्राप्ति की धीमी प्रगति

(Slow Progress in Achieving Green Growth)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- जून 2017 में OECD ने "***ग्रीन ग्रोथ इंडिकेटर 2017***" नामक एक रिपोर्ट जारी की जिसमें *ग्रीन ग्रोथ* में हुई धीमी प्रगति पर प्रकाश डाला गया।

ग्रीन ग्रोथ इंडिकेटर 2017

ग्रीन ग्रोथ क्या है?

- ग्रीन ग्रोथ से आशय ऐसी आर्थिक संवृद्धि और विकास को बढ़ावा देने से है जिसके तहत मानव के कुशलतापूर्वक जीवनयापन हेतु आवश्यक प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने के साथ ही पर्यावरण को सुरक्षित रखना है।

Headline indicators

Environmental and resource productivity	
Carbon and energy productivity	1. CO_2 productivity
Resource productivity	2. Non-energy material productivity
Multifactor productivity	3. Environmentally adjusted multifactor productivity
Natural asset base	
Renewable and non-renewable stocks	4. Natural resource index
Biodiversity and ecosystems	5. Changes in land cover
Environmental quality of life	
Environmental health and risks	6. Population exposure to air pollution ($PM_{2.5}$)
Economic opportunities and policy responses	
Technology and innovation Environmental goods and services Prices and transfers Regulations and management approaches	*Placeholder: no indicator specified*

VISION IAS

- *ग्रीन ग्रोथ* का मापन ***ग्रीन ग्रोथ इंडीकेटर्स*** से किया जाता है। इसमें भूमि उपयोग के तरीके, CO_2 उत्पादकता और नवाचार जैसे सभी तत्व शामिल होते हैं।

इस रिपोर्ट के मुख्य बिंदु

- अक्षय ऊर्जा में BRIICS की औसत हिस्सेदारी 14.8% है जो कि OECD की 9.6% की तुलना में अधिक है, किन्तु 1990 से BRIICS की हिस्सेदारी में गिरावट दर्ज की जा रही है।
- ग़ैर-ऊर्जागत अपरिष्कृत सामग्री (non energy raw material) का सर्वाधिक निष्कर्षण चीन और अमेरिका द्वारा किया जाता हैं। इसके बाद भारत और ब्राजील (अधिकांशतः बायोमास) तथा दक्षिण अफ्रीका और कनाडा (अधिकांशतः धातुएँ) का स्थान आता है।
- विश्व में नगरीकरण तेजी से बढ़ रहा है। यहां तक कि उच्च नगरीकृत देशों में भी यह प्रवृति विद्यमान है। OECD राष्ट्रों में जनसंख्या की तुलना में इमारतों से घिरे हुए क्षेत्रों की वृद्धि अधिक तीव्रता से हो रही है।
- वायु प्रदूषण का स्तर असुरक्षित रूप से उच्च बना हुआ है। OECD देशों में तीन में से एक देश WHO के सूक्ष्म पार्टिकुलेट मैटर से सम्बंधित दिशा निर्देशों का पालन करते हैं। इसके साथ ही चीन और भारत में भी प्रदूषण का स्तर उच्च है।
- लगभग 90% ग्रीन टेक्नोलॉजीज को OECD देशों में विकसित किया जाता है, किन्तु इसमें चीन और भारत के योगदान में तीव्रता से वृद्धि हो रही है।
- विभिन्न देश पर्यावरण संबंधी करों का अपेक्षाकृत अधिक उपयोग कर रहे हैं किन्तु 1995 से कुल कर राजस्व में इन करों के योगदान में कमी देखी गई है।

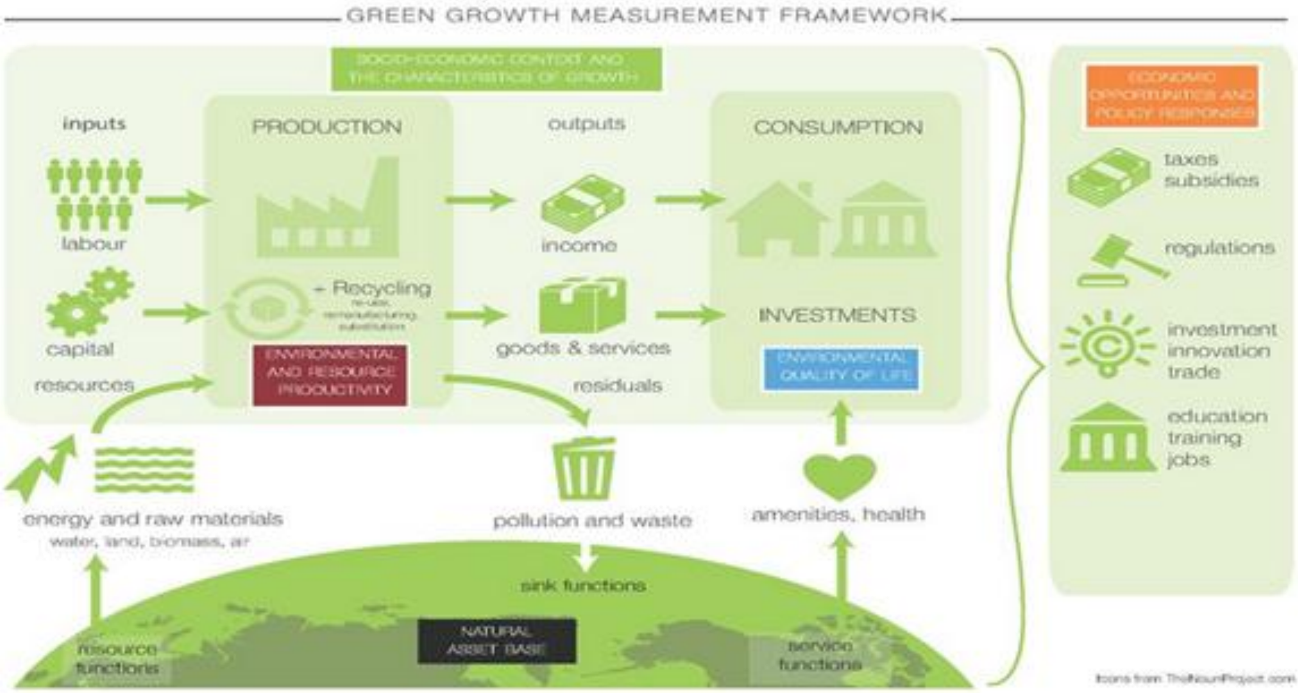

***ग्रीन ग्रोथ* के लिए भारत द्वारा उठाए गए कदम**

अनुसंधान

- ***ऐन इनिशियेटिव ऑन ग्रीन ग्रोथ एंड डेवलपमेंट इन इंडिया,*** *Global Green Growth Institute* (GGGI) और TERI की एक साझा परियोजना है।

मिशन

- ***नेशनल मिशन फॉर ग्रीन इंडिया,*** *नेशनल एक्शन प्लान ऑन क्लाइमेट चेंज* (NAPCC) के तहत संचालित 8 मिशनों में से एक है।

अवसंरचना

- *ग्रीन हाइवेज (प्लांटेशन, ट्रांसप्लांटेशन, ब्यूटीफ़िकेशन एंड मेंटेनेंस) पॉलिसी।*
- ***स्मार्ट सिटीज़ मिशन*** के तहत हरित अवसंरचना (*ग्रीन इंफ्रास्ट्रक्चर*) पर बल।

कर एवं अन्य उपाय

- 2014 से पेट्रोल और डीजल पर *एक्साइज टैक्स* में 150 फीसदी से अधिक की वृद्धि हुई है, इसे दरअसल ***कार्बन टैक्स*** माना जा सकता है।
- **कोयला उपकर जो कोयले के खनन की कुल लागत के पाँचवे हिस्से के बराबर है।**
- **सभी विद्युत वितरण कम्पनियों और विद्युत् उत्पादकों पर *रिन्यूएबल पर्चेज ऑब्लीगेशन्स* का आरोपण।**

3.2.2. जलवायु परिवर्तन के प्रभाव के साक्ष्य

(Evidences of Impact of Climate Change)

A. बढ़ता तापमान मृदा से अधिक कार्बन डाइ ऑक्साइड विमोचन का कारण बनता है

नेचर पत्रिका में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार बढ़ता वैश्विक तापमान मिट्टी से कार्बन विमोचन को तीव्र कर रहा है। वायु में अधिक कार्बन डाइऑक्साइड भूमंडलीय तापन को तीव्र करेगा।

यह क्या है ?

- मृदा ने विशाल मात्रा में कार्बनिक पदार्थ जमा किये हैं, विशेष रूप से टुंड्रा और बोरियल वनों में। जैसे-जैसे मृदा के तापमान में वृद्धि होती है, माइक्रोबियल गतिविधि बढ़ जाती हैं और कार्बन या मीथेन मुक्त होती है। ये दोनों ही सक्रिय ग्रीन हाउस गैस हैं जो ग्लोबल वार्मिंग में योगदान कर रही हैं।
- अध्ययन में कहा गया है कि तापमान में 1 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि के परिणामस्वरूप 30 पेन्टाग्राम्स कार्बन मुक्त होगा जो वार्षिक रूप से मानवजनित गतिविधियों के कारण उत्सर्जित मात्रा का दोगुना है।
- उत्सर्जन में बड़े पैमाने पर वृद्धि से वैश्विक तापमान को 2 डिग्री सेल्सियस से ऊपर जाने से रोकने के लिए किये जा रहे प्रयासों को झटका लग सकता है।

B. जलवायु परिवर्तन के कारण कनाडा की नदी की प्रवाह की दिशा में परिवर्तन: अध्ययन

(Climate Change Redirects Canadian River: Study)

- जलवायु परिवर्तन के कारण कनाडा के सबसे बड़े ग्लेशियरों में से एक ग्लेशियर की बर्फ पिघलने (ग्लेशियर प्रत्यावर्तन) के कारण लगभग रातोंरात एक उत्तरी नदी का प्रवाह परिवर्तित हो गया है। नदी के प्रवाह में हुए परिवर्तन की इस घटना को शोधकर्ताओं ने क्लाइमेट चेंज जनित "रिवर पायरेसी" कहा है।
- सैकड़ों वर्षों से, स्लिम्स नदी ग्लेशियर का पिघला हुआ जल उत्तर की ओर अर्थात् विशाल कास्कवुल्श ग्लेशियर से बेरिंग सागर की ओर प्रवाहित करती थी। परन्तु 2016 की बसंत ऋतु में गर्मी के कारण ग्लेशियर के बहुत तेजी से पिघलने से जल का बहाव बहुत तीव्र हो गया, जल के तीव्र बहाव ने वर्षों से बह रही स्लिम्स नदी से अलग रास्ता बना लिया। वर्तमान में यह जल एक दूसरी नदी (अल्सेक नदी) के माध्यम से प्रवाहित होने लगी है।
- यह पाया गया कि एक ग्लेशियल बैरियर जो किसी समय में उत्तर में बेरिंग सागर की ओर प्रवाहित होता था, उसका बसंत ऋतु में अतिक्रमण हो गया।

C. प्रवाल विरंजन

- एक अध्ययन रिपोर्ट में यह सामने आया है कि ऑस्ट्रेलिया के पूर्वी तट के पास अवस्थित 2300 किलोमीटर लम्बी ग्रेट बैरियर रीफ, अभी तक के दर्ज इतिहास में सबसे गंभीर **प्रवाल विरंजन** (कोरल ब्लीचिंग) का सामना कर रही है।

- यह ब्लीचिंग इस वर्ष मार्च और अप्रैल के दौरान समुद्री तापमान में वृद्धि के कारण हुआ है जिसमें अधिकतम क्षति उत्तरी, मौलिक भाग (northern, pristine part) में हुई है।
- वैज्ञानिकों का अनुमान है कि उत्तरी क्षेत्र में सबसे अधिक नुकसान हुआ है। इस क्षेत्र में नष्ट हुए कोरल की पुनर्प्राप्ति में कम से कम 10-15 वर्ष लग जाएँगे। हालांकि, एक प्रमुख मुद्दा यह भी है कि यदि पुनर्प्राप्ति के पहले ही व्यापक ब्लीचिंग की घटना हो जाती है तो यह कोरल की पुनर्प्राप्ति में बाधा उत्पन्न कर सकती है।
- रीफ का दक्षिणी दो-तिहाई भाग मामूली नुकसान के साथ सुरक्षित है।

3.2.3. जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करने के लिए भारत द्वारा उठाए गए कदम

Initiatives By India To Counte Change

भारत जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए कई उपाय कर रहा है। विशेष रूप से शमन (*मिटिगेशन*) पर ध्यान दिया जा रहा है। सरकार ने किए जा रहे प्रयासों के संबंध में देश के नागरिकों तथा अन्य देशों तक जानकारी पहुँचाने के लिए 2015 में *आउटरीच* कार्यक्रम भी आरंभ किया था।

इस सन्दर्भ में निम्नलिखित कदम उठाए गए हैं:

नीतिगत विकास	• **जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC):** भारत सरकार ने NAPCC के एक भाग के रूप में विशिष्ट क्षेत्रों में **आठ मिशन** प्रारंभ किये हैं। इनमें जलवायु परिवर्तन के प्रभाव का आकलन और जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए आवश्यक कार्यवाहियाँ भी सम्मिलित हैं। जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना में नवीन ज्ञान के आधार पर संशोधन किये जा रहे हैं। इसके साथ ही स्वास्थ्य, अपशिष्ट ऊर्जा, तटीय क्षेत्र आदि से सम्बद्ध कुछ नए मिशन भी जोड़े जा रहे हैं। • **मरूस्थलीकरण से निपटने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना (*नेशनल एक्शन प्रोग्राम टू कॉम्बैट डेजर्टीफिकेशन*):** इसे निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए प्रस्तावित किया गया है- ○ भू निम्नीकरण का आकलन व मानचित्रण, सूखे की निगरानी व समय-पूर्व चेतावनी प्रणाली (*अर्ली वार्निंग सिस्टम)* का विकास, सूखे से निपटने की तैयारियों से जुडी योजनाएँ तथा स्वदेशी तकनीकों के विकास के लिए *ऑन-फार्म* रिसर्च। • कैबिनेट द्वारा **राष्ट्रीय जैव ईंधन नीति** का अनुमोदन किया गया है। इसका उद्देश्य जैव ईंधनों वाली फसलों की कृषि, जैव-ईंधनों का उत्पादन और परिवहन व अन्य अनुप्रयोगों में उनके उपयोग को बढ़ावा देना है।
वित्त पोषण	• जलवायु परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय अनुकूलन निधि (*नेशनल अडॉप्टेशन फण्ड फॉर क्लाइमेट चेंज*) • 200 रुपये/टन की दर से कोयला उपकर (*कार्बन सेस*) लगाया गया है तथा पेट्रोल व डीजल पर भी कर बढ़े हैं। इन करों को नागरिकों पर लगाए जा रहे कार्बन टैक्स के रूप में देखा जाना चाहिए। • राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा फंड (NCEF) का निर्माण स्वच्छ ऊर्जा पहलों के वित्तपोषण, उन्हें प्रोत्साहन देने तथा स्वच्छ ऊर्जा व संबंधित गतिविधियों हेतु अनुसंधान का वित्तपोषण करने के लिए किया गया था। इस फंड को *कार्बन सेस* द्वारा धन उपलब्ध कराया जाता है।
अंतर्राष्ट्रीय सहयोग	• भारत *ग्लोबल वार्मिंग* और जलवायु परिवर्तन का सामना करने के लिए किये गए प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय समझौतों का पक्षकार है। • भारत ने पेरिस समझौते का अनुसमर्थन किया है तथा किगाली समझौते पर भी हस्ताक्षर किए हैं। • *इंटरनेशनल सोलर अलायन्स* (अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन) का शुभारंभ।

VISION IAS

वानिकी	• कैम्पा (CAMPA) का गठन • राष्ट्रीय ग्रीन हाईवे मिशन • कृषि-वानिकी को प्रोत्साहन, वन प्रबंधन में सामुदायिक भागीदारी
नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में प्रगति	भारत वर्तमान में विश्व के सबसे बड़े नवीकरणीय क्षमता विस्तार कार्यक्रम का संचालन कर रहा है। वर्ष 2022 तक कुल नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता का लक्ष्य बढ़ाकर 175 गीगा वाट (GW) कर दिया गया है। इसमें से 100 GW सौर ऊर्जा, 60 GW पवन ऊर्जा, 10 GW बायोमास ऊर्जा तथा 5 GW छोटी जल विद्युत परियोजनाओं से प्राप्त ऊर्जा होगी।
जलवायु संबंधी उद्देश्यों के साथ विकास परियोजनाओं को जोड़ना	अपने INDC में भारत ने कई फ्लैगशिप सरकारी कार्यक्रमों को भी शामिल किया है। उदाहरण के लिए- स्मार्ट सिटी मिशन, अटल कायाकल्प एवं शहरी रूपांतरण मिशन (अमृत या AMRUT), स्वच्छ भारत मिशन, राष्ट्रीय धरोहर विकास एवं संवर्धन **योजना** (हृदय या HRIDAY), स्वच्छ गंगा के लिए राष्ट्रीय मिशन, मेक इन इंडिया नीति, मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना, प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना और जलवायु उद्देश्यों के लिए कई अन्य योजनाएँ।

उपलब्धि: अपने INDC में भारत ने कहा है कि उसकी उत्सर्जन तीव्रता (*एमिशन इंटेंसिटी*) 2010 में ही 2005 के मुकाबले 12 प्रतिशत कम हो चुकी है।

जलवायु परिवर्तन से निपटने में भारत के समक्ष चुनौतियाँ:

(a) विश्व की गरीब आबादी का लगभग 30 प्रतिशत भारत में निवास करता है। भारत में विश्व की ऐसी आबादी के 24 प्रतिशत लोग निवास करते हैं जिन्हें विद्युत उपलब्ध नहीं है। यहाँ सुरक्षित पेयजल 92 मिलियन लोगों की पहुँच से दूर है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के संदर्भ में भारत की सुभेद्यता को इनके साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए। इससे पता चलता है कि भारत के समक्ष संधारणीय विकास के एजेंडे को संतुलित करने की एक गंभीर व जटिल चुनौती मौजूद है।

(b) वर्तमान उपलब्धियों को देखते हुए नवीकरणीय ऊर्जा के लिए तय किये गए लक्ष्यों को हासिल करना एक बड़ा कार्य प्रतीत होता है।

(c) लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए वित्त जुटाना एक महत्वपूर्ण मुद्दा है।

(d) भारत के पास जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए आवश्यक अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी की कमी है।

(e) भारत में कई मिशनों को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक कुशल जनशक्ति का अभाव है। उदाहरण के लिए सौर प्रौद्योगिकी, पवन ऊर्जा उत्पादन आदि से संबंधित कुशल व्यक्तियों की भारी कमी है।

3.2.4. क्लाइमेट इंजीनियरिंग

(Climate Engineering)

क्लाइमेट इंजीनियरिंग क्या है?

- क्लाइमेट इंजीनयरिंग को जिओइंजीनयरिंग नाम से भी जाना जाता है। क्लाइमेट इंजीनयरिंग प्रतिकूल जलवायु परिवर्तन को सीमित करने के उद्देश्य से पृथ्वी की जलवायु प्रणाली में जानबूझकर और बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप से संबंधित है।
- क्लाइमेट इंजीनियरिंग को कभी-कभी जलवायु परिवर्तन के शमन और अनुकूलन के साथ ही जलवायु परिवर्तन को सीमित करने वाले अतिरिक्त संभावित विकल्प के रूप में देखा जाता है।

इंजीनियरिंग समाधान की आम तौर पर दो श्रेणियाँ हैं:

1. वायुमंडल से ग्रीनहाउस गैस को हटाना: इसके तहत मुख्य रूप से कार्बन का प्रबंधन सम्मिलित है। इसमें सम्मिलित हैं:

- कार्बन कैप्चर और स्टोरेज (CCS), जहाँ कोयला आधारित बिजली स्टेशनों द्वारा उत्सर्जित कार्बन डाइऑक्साइड की कुछ मात्रा को प्राकृतिक रूप से सोखकर उसका किसी अन्य स्थान (जैसे तेल क्षेत्रों में) पर परिवहन करके उसका भूमिगत प्राच्छादन किया जाता है।

- वनावरण में वृद्धि करना चूँकि पौधे अवांछित कार्बन डाईऑक्साइड का अवशोषण करते हैं। वनावरण में वृद्धि करना भारत की कार्बन डाईऑक्साइड को कम करने की रणनीति का भाग है।
- ओशन फ़र्टिलाइजेशन (Ocean fertilization)
- बायोचार (Biochar)

हालांकि, यह स्पष्ट नहीं है कि CCS, पुर्नवनीकरण और कार्बन में कमी करने के अन्य तरीके ग्लोबल वार्मिंग को धीमा करने के लिए वैश्विक स्तर पर पर्याप्त प्रभाव डाल सकते हैं या नहीं।

2. सोलर रेडिएशन मैनेजमेंट या सनलाइट रिफ्लेक्शन मेथड्स (SRM): इस पद्धति का उद्देश्य पृथ्वी की सतह की परावर्तिता में वृद्धि करके या वायुमंडल में परावर्तक कणों की एक परत बनाकर सूर्य के प्रकाश को अंतरिक्ष में पुन:परावर्तित करना है जिससे कि ग्रीनहाउस गैसों द्वारा अवशोषित ऊष्मा की मात्रा में कमी हो सके।

SRM के अंतर्गत आने वाली तकनीकों में मरीन क्लाउड ब्राइटनिंग, सिरस क्लाउड मैनीपुलेशन और स्ट्रेटोस्फेरिक एरोसोल इंजेक्शन (SAI) सम्मिलित हैं।

स्ट्रेटोस्फेरिक एयरोसोल इंजेक्शन (SAI): SAI में सूक्ष्म, हल्के रंग के कणों का समतापमंडल में छिड़काव करना शामिल है, इन कणों को इस तरह डिजाईन किया जाता है कि ये कण सौर विकिरण के पृथ्वी पर पहुँचने से पहले ही उसकी कुछ मात्रा को वापस परावर्तित कर देते हैं। SAI के समर्थक दावा करते हैं कि इससे वैश्विक तापमान में कम से कम 1°C की कमी की जा सकती है।

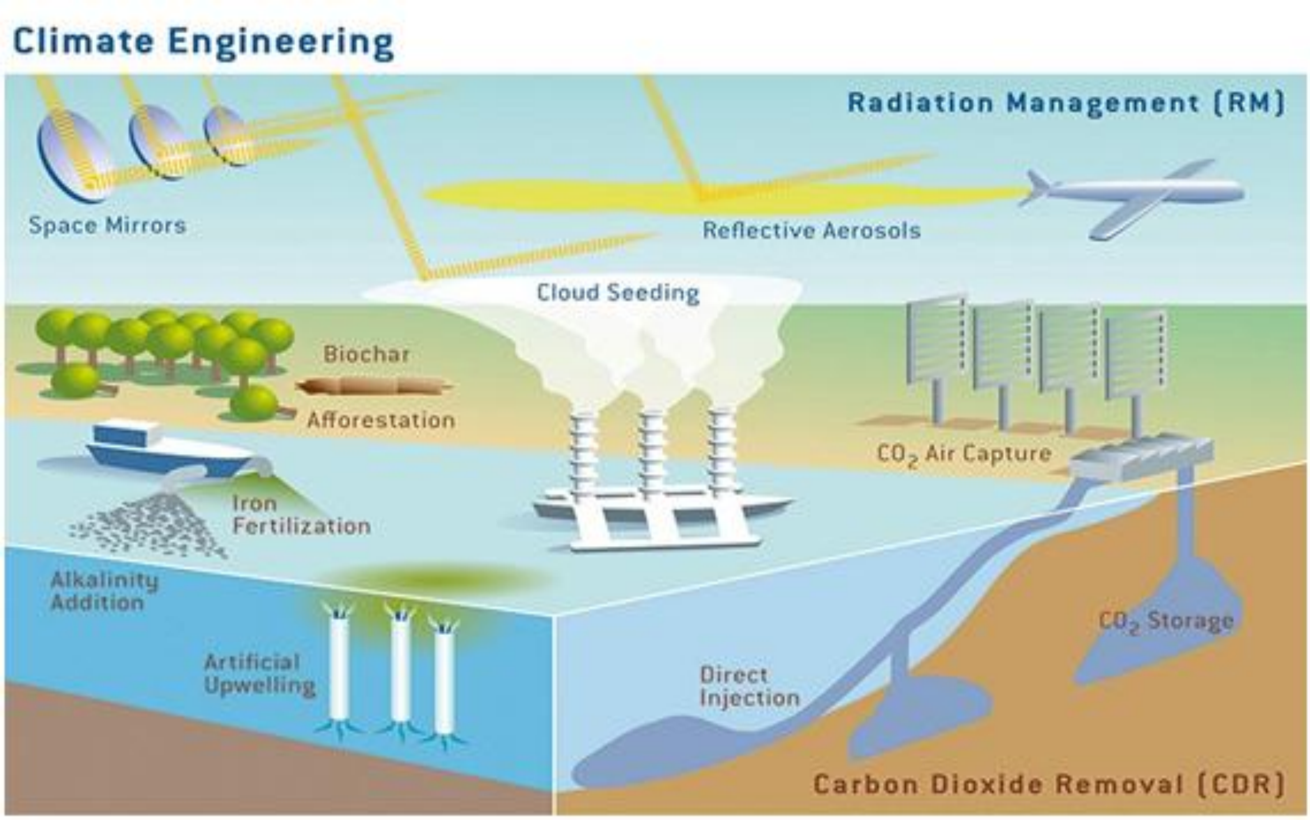

चिंताएँ

- इस स्तर पर किसी भी प्रौद्योगिकी का उपयोग नहीं किया गया है जो वैश्विक जलवायु को प्रभावित कर सके।
- जलवायु शासन (क्लाइमेट गवर्नेंस) और मानव समाज पर इसके संभावित प्रभावों की जटिलता और अनिश्चितता ही गंभीर सवाल खड़े करती हैं।
- प्रौद्योगिकी और जलवायु तंत्र दोनों का अपूर्ण ज्ञान: पर्यावरणीय और पारितंत्र पर पड़ने वाले आकस्मिक दुष्प्रभावों के बारे में चिंताएं व्यक्त की जा रही हैं। यह प्राकृतिक परिवेश एवं मौसम के पैटर्न के साथ-साथ इन पर निर्भर जीवन और आजीविका को भी प्रभावित कर सकता है।

- यह इस दिशा में पहले से किये जा रहे उपायों की ओर से संसाधनों को अपनी ओर आकृष्ट कर सकता है और कार्बन उत्सर्जन को कम करने हेतु पहले से जारी इन प्रयासों की गति को धीमा कर सकता है।

आगे की राह

क्लाइमेट इंजीनियरिंग में शोधकार्य समुचित नियामकीय निरीक्षण के तहत ही किए जाने चाहिए। अनुसंधान और विकास की देखरेख करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय शासन तंत्र को विकसित करने की आवश्यकता है।

साथ ही, जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए हमें क्लाइमेट इंजीनियरिंग के समाधानों पर अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए, बल्कि ऊर्जा संरक्षण, उत्सर्जन में कमी एवं वनीकरण जैसे पारंपरिक समाधानों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

3.3. स्वच्छ उर्जा

(Clean Energy)

3.3.1. कार्बन फुटप्रिंट को कम करना

(Reducing Carbon Footprint)

आंतरिक कार्बन मूल्य

(Internal Carbon Price)

सुर्खियों में क्यों?

महिंद्रा एंड महिंद्रा उत्सर्जित कार्बन के प्रति टन 10 डॉलर के आंतरिक कार्बन मूल्य की घोषणा करने वाली पहली भारतीय फर्म बन गयी है।

आंतरिक कार्बन मूल्य क्या है?

यह एक अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त व्यावसायिक उपकरण है जो कंपनियों को ऐसे संसाधनों के निर्माण में सक्षम बनाता है जिनका कम कार्बन उत्सर्जन प्रौद्योगिकी में निवेश किया जा सके, जिससे भविष्य में उत्सर्जन और परिचालन लागत में कमी लाने में मदद मिले।

महत्व

- नवाचार में तेजी लाने और ऊर्जा कुशल एवं नवीकरणीय प्रौद्योगिकियों में निवेश बढ़ाने में मदद करेगा।
- कार्बन जोखिम का प्रबंधन करते हुए निम्न-कार्बन उत्सर्जन निवेश के अवसरों का लाभ मिल पाएगा।
- कुछ वैश्विक कंपनियों ने कार्बन मूल्य निर्धारण (carbon pricing) घोषित किया है जिनमें, माइक्रोसॉफ्ट, यूनीलिवर, गूगल शामिल हैं।
- महिंद्रा ने विश्व बैंक और IFC संचालित कार्बन प्राइसिंग नेतृत्व गठबंधन (Carbon Pricing Leadership Coalition) के साथ ही भारत स्थित विश्व संसाधन संस्थान के साथ कार्बन मूल्य तंत्र में अपनी समझ बढ़ाने हेतु साझेदारी की है।

कार्बन मूल्य कार्बन प्रदूषण के ऊपर लगायी गई एक लागत है जो प्रदूषक को वातावरण में उत्सर्जित हाउस गैस की मात्रा कम करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

कार्बन मूल्य निर्धारण मुख्यतः दो प्रकार से होता है:

- उत्सर्जन व्यापार प्रणाली (Emmission Trading System, ETS)
- कार्बन टैक्स।

ETS जिसे कभी कभी कैप-एंड-ट्रेड सिस्टम भी कहा जाता है - ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के कुल स्तर की कैपिंग कर देता है और कम उत्सर्जन करने वाले उद्योगों को अपना अतिरिक्त अंश बड़े उत्सर्जनकर्ताओं को बेचने की अनुमति देता है।

कार्बन टैक्स, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कर की दर को निर्धारित करके या अधिक सामान्य रूप से जीवाश्म ईंधन में कार्बन कंटेंट के आधार पर कार्बन का प्रत्यक्ष मूल्य निर्धारण करता है।

VISION IAS

कार्बन कर और भारत में कार्बन कर की व्यवहार्यता

कार्बन कर

- हाइड्रोकार्बन ईंधन के दहन से CO_2 मुक्त होती है जिसका पर्यावरण और समाज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार इसकी सामजिक लागत व्यक्तिगत/निजी लागत से अधिक है। कार्बन कर इन हाइड्रोकार्बन ईंधनों पर लगाया जाता है ताकि बाह्य परिवेश पर पड़ने वाले इसके नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सके। इसका उद्देश्य लोगों को ऐसे उत्पादों का उपयोग करने से रोकना है जिनमें हाइड्रोकार्बन ईंधन के दहन की आवश्यकता होती है तथा एकत्र किए गए राजस्व का उपयोग वैकल्पिक उत्पादों के उत्पादन के लिए करना।
- IMF जैसी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा नियमित रूप से इसका सुझाव दिया जाता रहा है।

भारतीय स्थिति

- भारत ने 2010 में देश में उत्पादित और आयातित कोयले पर 50 रु. प्रति मीट्रिक टन की दर से एक देशव्यापी कार्बन कर का प्रावधान किया था। 2014 में, सरकार ने इसको बढ़ाकर 100 रु. प्रति मीट्रिक टन कर दिया। अब इसे 100 रु. प्रति टन से और बढ़ाकर 200 रु. प्रति टन कर दिया गया है।
- कार्बन कर, कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में कमी करने के भारत के स्वैच्छिक लक्ष्य को पूरा करने में मदद करेगा।

पक्ष में तर्क

- हरित प्रौद्योगिकी के विकास के लिए राजस्व का उपयोग करना;
- लोगों को हाइड्रोकार्बन से नवीकरणीय पद्धतियों की ओर स्थानांतरित करना। इससे साइक्लिंग, कार पूलिंग जैसी स्वास्थ्यकारी आदतों का विकास हो सकेगा।
- सामाजिक रूप से कुशल आय को बढ़ाना।

विपक्ष में तर्क

- राजस्व का कुशलता से संग्रहण नहीं हो सकेगा, इसका कार्यान्वयन कठिन हो सकता है तथा प्रशासन की लागत बढ़ सकती है।
- कर अपवंचन के माध्यम से प्रच्छन्न गतिविधियों को बढ़ावा।
- उच्च प्रदूषण वाले क्षेत्रों की तरफ उत्पादन का स्थानांतरण।
- विकासशील देश आवश्यक ईंधन की लागत में वृद्धि का प्रबंधन नहीं कर सकेंगे।
- हो सकता है कि लागत में बढ़ोतरी इतनी कम हो कि शायद इसका कोई ठोस प्रभाव न पड़े।

3.3.2. जैव ईंधन (Biofuels)

HPCL द्वारा पंजाब के बठिंडा में दूसरी पीढ़ी की प्रथम जैव इथेनॉल रिफाइनरी स्थापित की जाएगी।

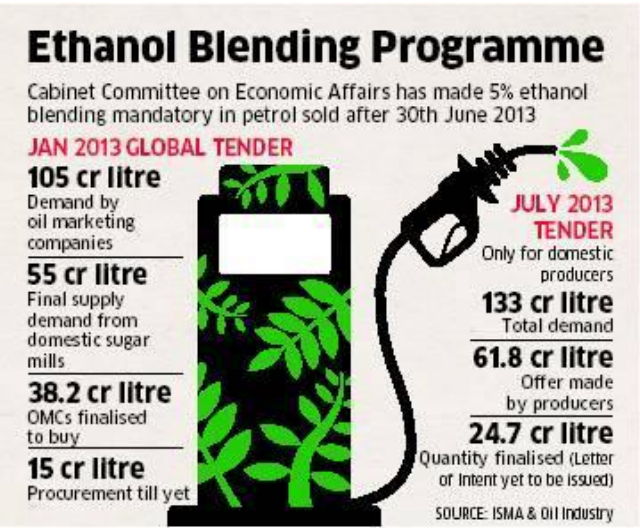

जैव ईंधन की पीढियां

प्रथम पीढ़ी के जैव ईंधन

- वे सीधे खाद्य फसलों से उत्पादित किए जाते हैं।
- गेहूं जैसी फसलों तथा चीनी को सर्वाधिक मात्रा में फीडस्टॉक के रूप में प्रयुक्त किया जाता हैं।

द्वितीय पीढ़ी के जैव ईंधन

- यह खाद्य उत्पादों या गैर-खाद्य फसलों के लिए अनुपयुक्त सीमांत कृषिभूमि से प्राप्त किए जाते हैं जैसे- लकड़ी, जैविक अपशिष्ट, खाद्य फसल अपशिष्ट और विशिष्ट बायोमास फसलें। उदाहरण के लिए जट्रोफा।
- इस प्रकार, यह प्रथम पीढ़ी के जैव ईंधनों के परिप्रेक्ष्य में खाद्य उत्पादन बनाम जैव ईंधन की बहस को समाप्त करता है।

VISION IAS

- यह मौजूदा जीवाश्म ईंधन की तुलना में लागत प्रतिस्पर्धी भी है और निवल ऊर्जा प्राप्ति में भी वृद्धि करता है।

तृतीय पीढ़ी जैव ईंधन

- यह स्पेशली इंजीनीयर्ड एनर्जी क्रॉप्स (specially engineered energy crops) के सहयोग से जैव इंधन के उत्पादन में सुधार पर आधारित है जैसे ऊर्जा स्रोत के रूप में शैवाल।
- शैवालों को कम लागत, उच्च ऊर्जा और पूर्णतया नवीकरणीय फीडस्टॉक (renewable feedstock) के रूप में कार्य करने के लिए संवर्धित किया गया है।
- शैवाल में पारंपरिक फसलों की तुलना में प्रति एकड़ अधिक ऊर्जा उत्पादन करने की क्षमता होगी।

चतुर्थ पीढ़ी जैव ईंधन

- चतुर्थ पीढ़ी के जैव ईंधन का लक्ष्य धारणीय ऊर्जा का उत्पादन करना तथा कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण एवं संचय करना है।
- यह प्रक्रिया दूसरी और तीसरी पीढ़ी के उत्पादन से अलग है, इसमें उत्पादन के सभी चरणों में कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण कर लिया जाता है जिसका भू-भण्डारण (geo-sequestered) किया जा सकता है|
- यह कार्बन कैप्चर चौथी पीढ़ी के जैव ईंधन के उत्पादन को सिर्फ कार्बन शून्य (carbon neutral) बनाने के बजाय कार्बन ऋणात्मक (carbon negative) बनाता है क्योंकि यह उत्पादित कार्बन से अधिक कार्बन का अवशोषण करता है।

बायो-एथेनॉल पौधों के लाभ

- किसानों को आय के अतिरिक्त स्रोत प्रदान करते हैं।
- धान के पुआल से उत्सर्जित CO2 में कमी होगी, जिसे वर्तमान में, फसल कटाई के बाद जला दिया जाता है।
- इससे प्रतिवर्ष 30,000 टन जैव उर्वरक का उत्पादन होगा जिसे मृदा पोषक तत्व के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।
- ये प्रतिवर्ष 1 लाख किलोग्राम से अधिक जैव CNG का उत्पादन करेंगे जो परिवहन और खाना पकाने के लिए स्वच्छ ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है।
- ये जैव रिफाइनरियां, प्रति वर्ष लगभग 35-40 करोड़ लीटर एथेनॉल का उत्पादन करेंगी इस प्रकार यह EBP कार्यक्रम की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगी।

मुद्दे

- **पहली पीढ़ी के जैव ईंधन से सम्बंधित मुद्दे**
    - प्रमुख कमियों में से एक यह है कि, वे ऐसे बायोमास से प्राप्त होते हैं, जो एक खाद्य स्रोत भी है। यह वैश्विक खाद्य बाजार से बहुत बड़ी मात्रा में फसलों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है और पिछले कुछ वर्षों से खाद्य पदार्थों की कीमतों में वैश्विक वृद्धि के लिए इसे दोषी ठहराया गया है।
    - कुछ जैव ईंधन, ऋणात्मक निवल ऊर्जा प्रदान करते हैं, जिसका अर्थ है कि जैव ईंधन के उत्पादन के लिए व्यय की गई ऊर्जा, इससे प्राप्त होने वाली ऊर्जा की तुलना में अधिक है।
- दूसरी पीढ़ी के जैव ईंधन गैर-खाद्य बायोमास से प्राप्त होते हैं, परन्तु फिर भी भूमि उपयोग के लिए खाद्य उत्पादन के साथ प्रतिस्पर्धा करते हैं।
- अंत में, तीसरी पीढ़ी के जैव ईंधन में वैकल्पिक ईंधन हेतु बेहतर संभावना मौजूद है, क्योंकि उनकी खाद्य उत्पादन के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं है। हालांकि, अब भी आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनाने में उन्हें कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा हैं।

आगे की राह

- यह सुनिश्चित किया जाए कि जैव ईंधन के उत्पादन से भोजन की कमी, जल की कमी, उच्च खाद्य कीमते, वनोन्मूलन और अन्य पारिस्थितिकी हानि न हो।

VISION IAS

* जैव ईंधन, जीवाश्म ईंधन के वैकल्पिक स्रोत हैं, जो न केवल भारत का पेट्रोलियम आयात बिल कम करने में मदद कर सकते हैं बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण में भी सहायता कर सकते हैं।

3.3.3. हाइड्रोजन फ्यूल व्हीकल

(Hydrogen Fuel Vehicles)

सुर्ख़ियों में क्यों ?

हाल ही में 'टोयोटा मोटर नार्थ अमेरिका इंक' ने "प्रोजेक्ट पोर्टल" का अनावरण किया जो हैवी ड्यूटी ट्रक के इस्तेमाल के लिए डिजाईन किया गया 'हाइड्रोजन फ्यूल सेल सिस्टम' है।

ईंधन के रूप में हाइड्रोजन के लाभ

* हाइड्रोजन सबसे हल्का तत्व है किन्तु सभी ईंधनों में प्रति इकाई भार के अनुसार इसमें सर्वाधिक उर्जा होती है।
* इसका उर्जा घनत्व पेट्रोल की तुलना में तीन गुना अधिक होता है।
* हाइड्रोजन का निष्कर्षण गैर नवीकरणीय और नवीकरणीय दोनों प्रकार के संसाधनों सहित लगभग किसी भी हाइड्रोजन युक्त यौगिक से किया जा सकता है।
* वाहनों में हाइड्रोजन से प्राप्त अपशिष्ट उत्पाद केवल जल वाष्प और गर्म हवा होती है।

चुनौतियाँ

* सामान्यतः हाइड्रोजन प्राकृतिक रूप से स्वतंत्र अवस्था में नहीं पाया जाता। आमतौर पर ये ऑक्सीजन और कार्बन के साथ पाया जाता है।
* हाइड्रोजन का भंडारण एक चुनौती है क्योंकि हाइड्रोजन को संग्रहित करने के लिए उच्च दबाव, निम्न तापमान या रासायनिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता है।
* वर्तमान में हाइड्रोजन ईंधन आधारित वाहनों की उत्पादन लागत अधिक है।

3.3.4. भवनों में ऊर्जा संरक्षण

(Energy Conservation in Buildings)

पृष्ठभूमि

शहरों में वाणिज्यिक के साथ-साथ आवासीय इमारतों में उनकी विभिन्न ज़रूरतों, जैसे शीतलन, प्रकाश आदि के लिए अत्यधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह उच्च ऊर्जा आवश्यकता एक ओर तो वित्तीय बोझ बढ़ा रही है तो वहीँ दूसरी ओर GHG उत्सर्जन और ग्लोबल वार्मिंग में वृद्धि कर रही है।

इसे ध्यान में रखते हुए विभिन्न संगठन भवनों को अधिक से अधिक ऊर्जा कुशल बनाने के लिए काम कर रहे हैं।

भारत में ग्रीन बिल्डिंग रेटिंग से संबंधित तीन प्राथमिक एजेंसियाँ है:

* **ग्रीन रेटिंग फॉर इंटीग्रेटेड हैबिटैट असेसमेंट (GRIHA) :** टेरी (द एनर्जी एंड रिसोर्स इंस्टिट्यूट:TERI) और नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा विकसित।
* **इंडियन ग्रीन बिल्डिंग काउंसिल (IGBC) :** इस काउंसिल का लक्ष्य है, "सभी के लिए संधारणीय निर्माण परिवेश (sustainable built environment) का सृजन करना तथा 2025 तक भारत को संधारणीय निर्माण परिवेश के ग्लोबल लीडर्स में से एक बनाना"।
* **ऊर्जा दक्षता ब्यूरो (BEE) :** विद्युत मंत्रालय के अधीन सांविधिक निकाय। यह 1 से 5 स्टार स्केल के आधार पर बिल्डिंग को रेटिंग प्रदान करता है।

VISION IAS

भवनों में ऊर्जा संरक्षण क्यों आवश्यक है:

ऊर्जा की बचत को ऊर्जा के उत्पादन के समान ही माना जाता है। भारत अपनी ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आयात पर निर्भर है। इसे अपनी आबादी को स्वच्छ ऊर्जा प्रदान करने की चुनौतियों का भी सामना करना पड़ रहा है। भारत ने 2019 तक सभी को बिजली उपलब्ध कराने का लक्ष्य निर्धारित किया है। ऊर्जा संरक्षण उपायों से इसे विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता मिलेगी। जैसे:

- वित्तीय बोझ कम होगा।
- GHG उत्सर्जन में कमी आएगी।
- कम वनोन्मूलन और कोयले के कम खनन के परिणामस्वरूप जैव विविधता संरक्षण और पर्यावरण संरक्षण होगा।

चुनौतियाँ

ऊर्जा-दक्ष भवनों के निर्माण में उच्च निवेश की आवश्यकता होती है। इसके लिए आवश्यक प्रौद्योगिकियाँ भी सभी के पास उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त जागरूकता स्तर भी अत्यंत निम्न है।

हाल ही में हुए विकास

A. ग्रीन बिल्डिंग रेटिंग सिस्टम

पर्यावरण अनुकूल भवनों के निर्माण को बढ़ावा देने हेतु राजस्थान सरकार द्वारा इंडियन ग्रीन बिल्डिंग काउंसिल (IGBC) द्वारा विकसित ग्रीन बिल्डिंग रेटिंग प्रणाली को अंगीकृत किया गया है।

महत्व

- भवनों के निर्माण कार्य में प्रयुक्त प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को कम करने पर जोर दिया गया है।
- पर्यावरण-अनुकूल निर्माण कार्य सुनिश्चित करना।
- इसमें ग्रीन बिल्डिंग से संबंधित डिजाइन, निर्माण और संचालन से संबंधित पूर्वनिर्धारित मापदंडो को शामिल किया गया है।

B. एनर्जी कंज़र्वेशन बिल्डिंग कोड-2017

हाल ही में ऊर्जा मंत्री द्वारा *एनर्जी कंज़र्वेशन बिल्डिंग कोड -2017* (ECBC 2017) का शुभारम्भ किया गया। प्रारंभ में भारत सरकार द्वारा 27 मई 2007 को 'नए वाणिज्यिक भवनों' हेतु ECBC विकसित किया गया था।

- ECBC उन व्यावसायिक भवनों के लिए 'न्यूनतम ऊर्जा मानक' तय करता है और 22 राज्यों द्वारा इन्हें स्वयं के संशोधनों के बाद स्वीकार कर लिया गया है।

ECBC के बारे में अन्य तथ्य

- इसे BEE द्वारा *यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट (USAID)* की तकनीकी सहायता से विकसित किया गया हैं। यह सहयोग *US-इंडिया बाईलेटरल पार्टनरशिप टू एडवांस क्लीन एनर्जी- डिप्लॉयमेंट टेक्निकल असिस्टेंस (PACE-DTA) प्रोग्राम* के तहत किया गया।
- ECBC 2017, अप्रतिरोधी डिजाइन रणनीतियों को शामिल करके, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को इमारतों के डिजाइन में शामिल करने के लिए बिल्डरों, डिजाइनरों और निर्माताओं के लिए मानक एवं पैमाने निर्धारित करती हैं।
- यह नियमावली निवासियों के सुविधानुसार और जीवनचक्र मूल्य प्रभावकारिता की वरीयता के अनुसार व्यावसायिक इमारतों को ऊर्जा तटस्थ बनाने के लिए ऊर्जा संरक्षण के परिवर्धन को लक्षित करती है।
- ECBC-कॉम्प्लायंट का दर्ज़ा हासिल करने के लिए इमारत को कम से कम 25% ऊर्जा बचत प्रदर्शित करनी होगी।
- ऊर्जा दक्षता के प्रदर्शन में अतिरिक्त सुधार करके *ECBC प्लस या सुपर ECBC स्टेटस* जैसे उच्च ग्रेड प्राप्त किये जा सकेंगे, जिससे क्रमशः 35% और 50% की अतिरिक्त ऊर्जा बचत होगी।

VISION IAS

3.4. नवीकरणीय ऊर्जा: हाल में हुए विकास

(Renewable Energy: Recent Developments)

नवीकरणीय ऊर्जा: पृष्ठभूमि

लक्ष्य

- पेरिस जलवायु सम्मेलन में, भारत ने 2022 तक 175 GW की नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता प्राप्त करने का लक्ष्य रखा है। इसमें सौर ऊर्जा से 100 GW, पवन ऊर्जा से 60 GW, बायोमास से 10 GW और लघु जल विद्युत परियोजनाओं से 5 GW शामिल हैं।
- अगले तीन वर्षों के लिए विभिन्न नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के लिए लक्ष्य (मेगावाट में) निर्धारित किए गए हैं:

वर्तमान स्थिति

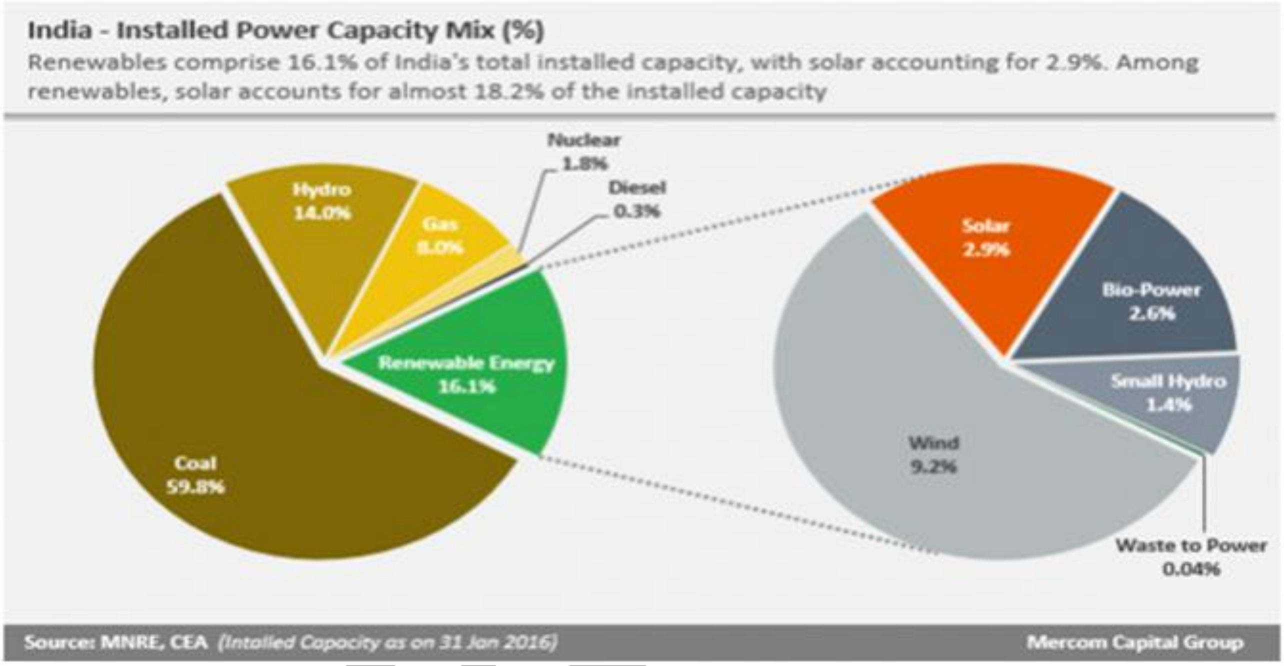

पवन संसाधन

प्रेक्षण

- पवन संसाधन मुख्य रूप से पश्चिमी राज्यों (गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान) और दक्षिणी राज्यों (आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और तेलंगाना) में केंद्रित हैं।

बाधाएं

अवस्थिति से सम्बंधित

- हाई वोल्टेज ट्रांसमिशन इंफ्रास्ट्रक्चर प्राप्त करने में उत्पन्न बाधा: 47% विंड ज़ोन्स (wind zones) और दो-तिहाई सोलर PV ज़ोन्स मौजूदा 220 KV और इससे अधिक ट्रांसमिशन वोल्टेज वाले सबस्टेशन से 25 किमी से भी अधिक दूरी पर अवस्थित हैं।
- सभी विंड ज़ोन का लगभग 84% कृषि भूमि पर अवस्थित है। यह भूमि के कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोगों के लिए अवसर प्रदान करता है, लेकिन साथ ही यह कृषि के लिए भूमि की उपलब्धता में बाधायें भी उत्पन्न कर सकता है।

पवन क्षेत्र के संकट

- जब पवन ऊर्जा संयंत्र विद्युत उत्पादन करते हैं तो आमतौर पर ग्रिड अनुपलब्ध रहती है। इसलिए विद्युत अप्रयुक्त रह जाती है। विंड एनर्जी डेवलपर्स (पवन ऊर्जा उत्पादकों) को तब ही भुगतान प्राप्त होता है जब उत्पादित विद्युत को ग्रिड में प्रवाहित किया जाता है।
- विलंबित भुगतानों के कारणों में सौर प्रशुल्क टैरिफ का कम होना है। डिस्कॉम्स प्रति यूनिट विद्युत के लिए 5 रुपये का भुगतान नहीं करना चाहते हैं, जबकि सौर लागत लगभग 3 रुपये प्रति यूनिट है।

उठाये गए कदम

(a) पवन और सौर उर्जा उत्पादन के लिए सह-स्थिति विकास की संभावना: नवीनतम शोध यह रेखांकित करते हैं कि सभी सौर PV जोन का लगभग एक चौथाई भाग (28 प्रतिशत) विंड जोन के साथ अतिव्यापन करता है अर्थात दोनों ऊर्जा उत्पादन के लिए एक ही स्थान के विकास हेतु यह एक उपयुक्त अवसर है। इससे दोनों के लिए इस्तेमाल किये जा सकने वाले ट्रांसमिशन एक्सटेंशन को विकसित करने में आसानी होगी और साथ ही यह किफायती भी होगा।

(b) पवन ऊर्जा सुधार: नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय द्वारा जारी दिशानिर्देश पवन ऊर्जा क्षेत्र में भुगतान और निकासी (evacuation) संबंधी समस्याओं का समाधान करते हैं।

- एक पेमेंट सिक्योरिटी मैकेनिज्म को प्रस्तुत किया गया। यह मैकेनिज्म बैक-डाउन (back downs) या ग्रिड अनुपलब्धता के समय विंड पॉवर डेवलपर्स के लिए आंशिक क्षतिपूर्ति की गारंटी प्रदान करता है।
- राज्य डिस्कॉम द्वारा भुगतान किया गया टैरिफ प्रतिस्पर्धी होना चाहिए तथा यह केवल फीड-इन टैरिफ और सोलर टैरिफ जितना ही नहीं हो जिसका लगभग 3.15 रूपये प्रति यूनिट की दर से भुगतान किया जा रहा है।

हाल ही में हुए अन्य विकास

2016-17 में 5,400 मेगावाट विद्युत् ऊर्जा का रिकॉर्ड उत्पादन

- भारत ने अपने 4,000 MW पवन ऊर्जा उत्पादन के लक्ष्य में वृद्धि करते हुए 2016-17 में 5,400 मेगावाट (MW) ऊर्जा उत्पादन का रिकॉर्ड बनाया।
- प्रमुख राज्यों में 2,190 MW पवन उर्जा उत्पादन के साथ आंध्र प्रदेश शीर्ष पर है, तत्पश्चात गुजरात और कर्नाटक का स्थान था।

वर्तमान में, पवन ऊर्जा की स्थापित क्षमता के सन्दर्भ में भारत विश्व स्तर पर चीन, अमेरिका और जर्मनी के बाद चौथे स्थान पर है।

भारत में सौर उर्जा

अवस्थिति

सोलर फोटोवोल्टिक (PV) संसाधन कई राज्यों में वितरित हैं, परन्तु राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में सर्वाधिक संसाधन क्षमता विद्यमान है।

बाधाएं

- उपयुक्त सोलर PV साइट्स का केवल 29% और कान्सन्ट्रैटड सोलर पॉवर (CSP) साइट्स का 15%, सतही जल निकायों के 10 किमी. के भीतर स्थित हैं, जो सौर संयंत्रों हेतु जल उपलब्धता को एक महत्वपूर्ण बाधा के रूप में इंगित करता है।
- भूमि उपयोग में प्रतिस्पर्धा और ट्रांसमिशन लाइनों के अवरोध सौर तथा पवन ऊर्जा दोनों को दुष्प्रभावित करते हैं।

सोलर रूफटॉप प्रोजेक्ट

आवश्यकता

- भारत ने 2022 तक 100 GW का सौर ऊर्जा प्राप्ति का एक महत्वाकांक्षी लक्ष्य तय किया है। 100 गीगावॉट में से सोलर PV (फोटोवोल्टिक) रूफटॉप सिस्टम के माध्यम से 40 GW का लक्ष्य नियत किए गए हैं। हालांकि, 2016 तक रूफटॉप सोलर कैपसिटी लगभग 1GW ही थी।
- भारत ने सोलर रूफटॉप क्षेत्र को अत्यधिक प्रोत्साहित किया है क्योंकि इसमें भूमि अधिग्रहण या पृथक ट्रांसमिशन सुविधाओं की आवश्यकता नहीं होती है। भूमि पर स्थापित सौर परियोजनाओं के विपरीत इसमें तकनीकी नुकसान भी न्यूनतम हैं।

- रूफटॉप प्रोजेक्ट्स पावर डिस्ट्रीब्यूशन कंपनियों को अपने अक्षय खरीद दायित्वों (RPO ; renewable purchase obligations) को पूरा करने के लिए भी सक्षम बनाती है। इन कंपनियों को डेटाइम पीक लोड (daytime peak load) को प्रबंधित करने में सहायता करती हैं।
- ट्रांसमिशन सिस्टम में किये जाने वाले निवेश की बचत कर बड़े वाणिज्यिक लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं।
- यह ग्रिड पॉवर तथा डीजल जनरेटरों पर निर्भरता को कम करता है तथा इसके साथ ही यह उपभोक्ताओं के लिए दीर्घकालिक एवं भरोसेमंद ऊर्जा स्रोत है।

प्रगति: भारत में रूफ़टॉप सोलर फोटोवोल्टिक क्षेत्रक के विकास हेतु सरकार, नियामक आयोगों तथा सम्बंधित एजेंसियों ने उल्लेखनीय प्रयास किये हैं। इसके परिणामस्वरूप देश में आधारभूत फ्रेमवर्क का विकास हुआ तथा सही मायनों में रूफ़टॉप सोलर पॉवर प्लांट पर क्रियान्वयन आरम्भ हो गया है।

- सरकार द्वारा इस क्षेत्र के लिए विभिन्न तरीकों से सहयोग किया गया है जैसे- आवासीय भवनों की छतों पर लगने वाले संयंत्रों के लिए 30 प्रतिशत पूंजीगत सब्सिडी, 40 प्रतिशत तक का त्वरित मूल्यह्रास लाभ, प्राथमिक क्षेत्रक के अंतर्गत संयंत्रों के वित्तीयन को प्रोत्साहन तथा ब्याज दरों में कमी।
- कई राज्य सरकारों द्वारा सोलर रूफ़ टॉप परियोजनाओं के प्रोत्साहन के लिए नेट मीटरिंग दिशानिर्देश जारी किये गए हैं।

वर्तमान स्थिति

जुलाई 2017 तक भारत ने सोलर रूफ़टॉप की 1 GW की स्थापित क्षमता हासिल कर ली है। ध्यातव्य है कि भारत का लक्ष्य 2022 तक 40GW की क्षमता प्राप्त करना है।

चुनौतियाँ

- नेट मीटरिंग के दिशानिर्देशों के बावजूद **बाजार में अनुभव और परिपक्वता की कमी के कारण** कई राज्यों ने रूफ़ टॉप सोलर पैनलों की कनेक्टिविटी से सम्बंधित विस्तृत प्रक्रिया की घोषणा अभी तक नहीं की है।
- **अंतिम स्वीकृति प्राप्त होने में देरी:** इसके अलावा एक आवासीय रूफ़ टॉप सोलर सिस्टम तक के लिए आवेदन करने की तारीख से कनेक्टिविटी हेतु धन मिलने के बीच 3-4 महीनों का समय लग जाता है। इसके अतिरिक्त बहुत सी ऐसी स्वीकृतियां एवं मजूरियाँ भी प्राप्त करनी होती हैं जो अलग अलग विभागों यथा नियामक आयोग, राज्य नोडल एजेंसी, DISCOMs, स्थानीय शहरी निकाय इत्यादि द्वारा दी जाती हैं। इस प्रक्रिया में भी समय लगता है।
- **उपभोक्ता के नजरिये से देखा जाये** तो विभिन्न विभागों की प्रक्रियाओं में जटिलताएं विद्यमान हैं। इसके कारण उन्हें इसे इन्स्टाल करने के लिए अपने रोजमर्रा के महत्त्वपूर्ण कार्यों को छोड़ना पड़ता है। CFA का लाभ उठाना, ग्रिड कनेक्शन के लिए आवेदन करना और वितरण लाइसेंस द्वारा बिल के निपटान का फॉलोअप जैसे कार्य इस प्रक्रिया को और अधिक दुरूह बनाते हैं।
- एक और महत्त्वपूर्ण चुनौती **कौशलयुक्त तथा प्रशिक्षित व्यक्तियों की अनुपलब्धता** है। यह छतों को किराये पर लेने से सम्बंधित समझौते में निहित खामियों तथा छत के मालिक और संयंत्र लगाने वाले के बीच भूमिकाओं और जिम्मेदारियों के वितरण को लेकर उठने वाले विवादों के साथ मिलकर एक बड़ी चुनौती बन जाती है।
- **वितरण सम्बन्धी:** किसी निश्चित स्थान पर लगे ट्रांसफार्मर की क्षमता के आधार पर वहां प्राप्त होने वाली बिजली पर भी कुछ सीमायें लगाई जाएंगी। इसके साथ-साथ अन्य ग्रिड सम्बन्धी समस्याएं यथा वोल्टेज नियंत्रण पर प्रभाव, ऊर्जा की गुणवत्ता, पूर्वानुमान तथा शेड्यूलिंग की समस्याएं ऐसी अन्य चुनौतियाँ हैं जिनपर ध्यान देने की आवश्यकता है।

हाल ही में हुए विकास

भारतीय सौर ऊर्जा निगम (Solar Energy Corporation of India -SECI) द्वारा केंद्र सरकार की इमारतों पर 1 GW रूफटॉप सोलर पॉवर परियोजनाओं को स्थापित करने के लिए निविदाएँ आमंत्रित की गयी हैं।

B. नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय (MNRE) ने 100 KW से अधिक क्षमता वाले सोलर रूफटॉप प्रोजेक्ट्स में प्रयुक्त सामग्री पर सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क में छूट प्रदान किया है। सरकार द्वारा यह कदम रूफटॉप सोलर पॉवर के उपयोग को प्रोत्साहित करने हेतु उठाया गया है।

इस कदम के प्रभाव

- इस कदम से रूफटॉप प्रोजेक्ट्स के माध्यम से विद्युत की कुल लागत में कटौती होने की उम्मीद है। इससे देश भर में रूफटॉप सोलर इंस्टालेशन्स को प्रोत्साहन मिलेगा।
- इससे घरेलू सौर मॉड्यूल विनिर्माण (डोमेस्टिक सोलर मॉड्यूल मैन्युफैक्चरिंग) में सहायता प्राप्त होगी। डेवलपर्स अधिकांशत: सौर स्थापनाओं (सोलर इंस्टालेशन्स) के लिए आयातित मॉड्यूल का उपयोग करते हैं, क्योंकि वे तुलनात्मक रूप से 8-10% सस्ते होते हैं। यह शुल्क आयातित और घरेलू के बीच के अंतराल को कम करेगा।

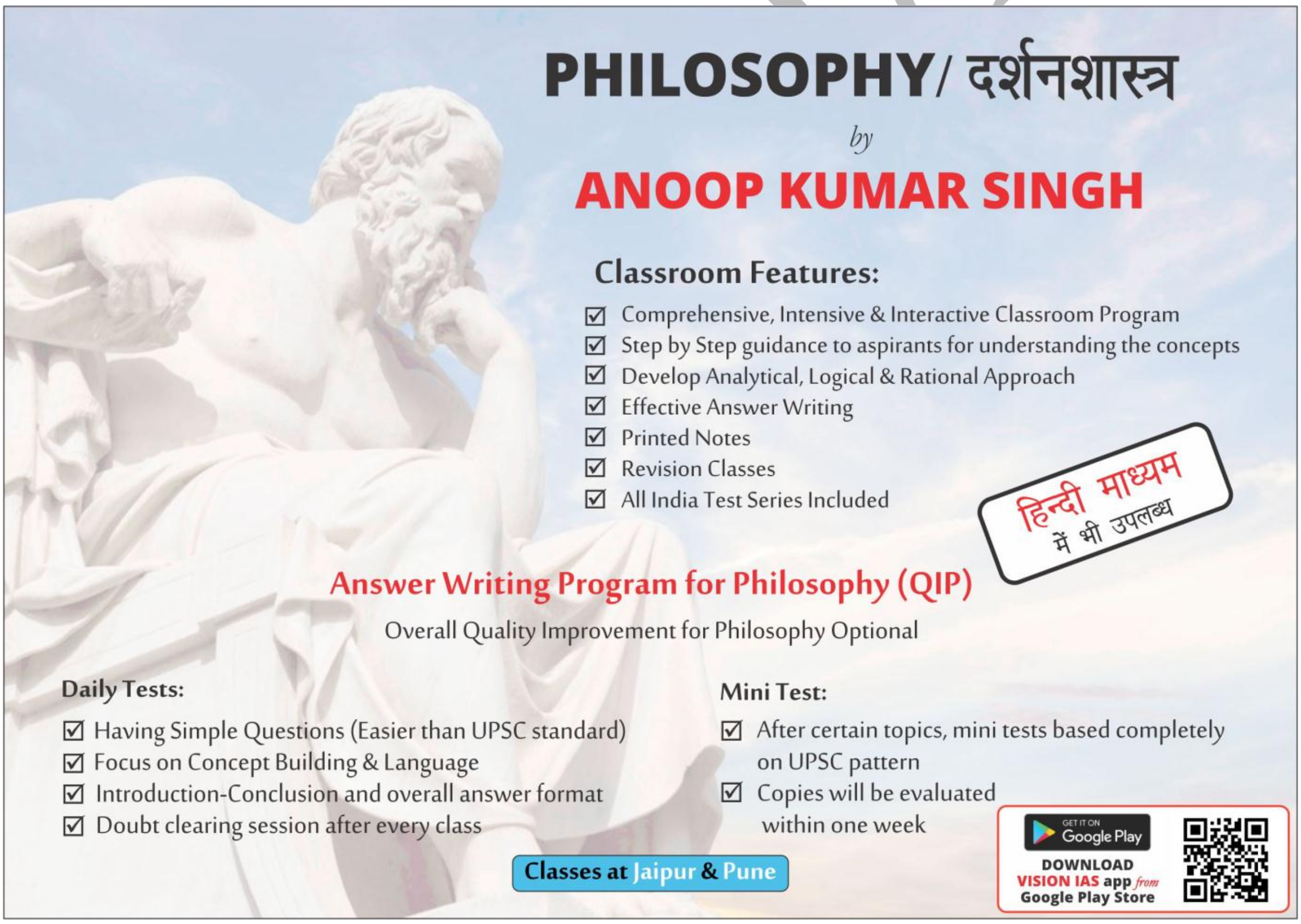

Copyright © by Vision IAS

All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.